

ब्रज रसात्मिका

पूज्या सन्त रमा देवी जी

वेणु विनोद कुञ्ज, वृन्दावन

Madhur Anupam Ras

॥ श्री राधाकृष्णाभ्यां नमः ॥

ब्रज रसात्मिका

(पूज्या सन्त रमा देवी जी जीवन-चरित)



सम्पादन :

पूज्या सन्त कुसुम देवी जी

संकलन-संयोजन-लेखन :

'श्री' चरणरज किंकर शिवकुमार गोयल (श्याम)

वेणु विनोद कुंज, वृन्दावन

प्रकाशक :

श्री चन्द्रमौलि सेवा समिति, शिकारपुर

(बुलन्दशहर) उ. प्र. पिन-203395

प्रकाशक :

श्री चन्द्रमौलि सेवा समिति

शिकारपुर (बुलन्दशहर) पिन-203395

प्रकाशन तिथि :

आश्विन शुक्ल एकादशी (गीता जयन्ती)

(जन्म तिथि प. पू. श्री बालकृष्ण दास जी महाराज)

दि. 14 दिसम्बर 2021, वि.सं. 2076

प्राप्ति स्थान :

(1) वेणु विनोद कुंज, सेवाकुंज, वृन्दावन, पिन-281121
मो. : 7895222517

(2) श्री चन्द्रमौलि सेवा समिति
शिकारपुर, (बुलन्दशहर), पिन-203395
मो. : 8279748605

(3) श्री ठाकुर बलदेव जी महाराज मन्दिर प्रबन्ध सेवा ट्रस्ट
शिकारपुर (बुलन्दशहर), पिन-203395
मो. : 9412584561

(4) गोविन्द गोयल-रुचिर गोयल
I-2, 48, सैक्टर-16, रोहिणी, दिल्ली-95
मो. : 9899799153, 9899898010

मुद्रक :

चौधरी प्रिंटिंग प्रेस

ब्रह्मकुण्ड, श्रीधाम वृन्दावन (मथुरा) उ. प्र., पिन-281121

मो. : 9837787802



मध्य अलक कपोल कुण्डल पर।
नासा बेसर मधुर अधर पर॥
कज्जल विशाल नयन कंज पर।
जित खंजन मीन मृगज लोचन पर॥
सूक्ष्म विभूषित दुकूल जंघ पर।
करधनि ध्वनित कमनीय कटि पर।
मैं न्यौछावर, हुई न्यौछावर॥



हे अलि! परम रसार्णव,
तुम रसाम्बुधि निधि,
रस अर्चन हो,
रश्मि वृन्दावन की
नित्य निकुञ्ज
अति गुञ्जन हो,
अलि! अभिनन्दन हो
अभिनन्दन हो!!

"मुझे नर्मदा किनारे के बीहड़ जंगलों में भटकती हुई को कैसे ढूंढ निकाल कर दर्शन दिया, बहुत ही आश्चर्य की बात है। खोज ही क्या लिया, खोजकर दर्शन भी दिया। वृन्दावन का आकर्षण भी दिया तथा अपने चरणों का अखण्ड आश्रय भी दिया और सदा-सदा के लिये वृन्दावन में नजरबन्द भी कर दिया।

प्रथम दर्शन से ही मुझे अपार सुख शान्ति का दर्शन हुआ। मेरी जन्म-जन्म की साधना पूर्ण हुयी।

गंगा समस्त पापों का नाश करती है। कल्पवृक्ष सर्वकामना पूर्ण करता है, चन्द्रमा शीतलता प्रदान करता है, परन्तु श्री महाराज जी ने तीनों वस्तु मुझे एक साथ ही प्रदान कीं।

मेरा हार्दिक दुख था-श्रीजी का सत्संग तथा बतलाया हुआ माधुर्यभाव मेरी समझ में न आना। मैं बिल्कुल मूर्ख अबोध बालिका तो थी ही, वृन्दावन के रस से बिल्कुल अनभिज्ञ। परन्तु अपनी अहैतुकी कृपा द्वारा मेरे हृदय में प्रत्यक्ष अनुभूति करा समझ की शक्ति प्रदान की।

मानो रचि खचि चन्द्रिका, राखी सखियन साथ।

यह मूर्तिमान भाव आपने अपनी अपार शक्ति द्वारा ही प्रदान किया। वस्तु प्रदान करते हुए साथ-साथ पात्रता प्रदान करने की एक अद्भुत शक्ति भी आपमें निहित थी।"



समर्पण

जिनकी कृपा जन्म से ही पा, सीखा मैंने दो डग धरना।
आज समर्पित 'श्री' चरणों में, बाल सदृश श्रद्धेय 'अर्चना'!

जिनकी स्नेहिल अहैतुकी कृपा से बालपन से ही अभिषिक्त रहा उन्हीं 'श्री' चरणों में सादर समर्पित।

–श्याम

अनुक्रमणिका

संत भावोद्गार

भाव प्रसून (संत-विद्वान भावांजलि)

संक्षिप्त जीवन वृत्त

रस निर्झर

अनुक्रमणिका

श्रद्धा सुमन

अनुक्रमणिका



आध्यात्मिक प्रकाश स्तम्भ-श्रीदेवीजी

-पूज्या संत कुसुम देवी जी
वेणु विनोद कुञ्ज, वृन्दावन

वृन्दावन कला नाथौ, हृदया नन्द बर्धनौ।
सुख दऊ राधिके कृष्णाऊ, भजऊ कुञ्ज गामिने॥

यह सृष्टि श्रीकृष्ण का पावन मन्दिर है। इस मन्दिर को पवित्र, स्वच्छ व सुव्यस्थित बनाये रखने के लिए ही भगवद अवतार आनन्द प्रदान करने के लिए व भगवदीय योजना व प्रेरणा से सन्त आविर्भाव जीवों पर करुणा करने के लिए होता है। सन्त इस धरा पर बद्ध जीवों को भगवत् चरणों में पहुँचाकर आनन्दित होते हैं एवं संसार के समक्ष साधन, त्याग, वैराग्य के आदर्श स्थापित कर पुन: नित्य धाम को चले जाते हैं किन्तु सन्तों की लोक यात्रा भी प्रियतम की मंगलमयी लीलाएँ ही होती हैं। वे कल्पवृक्ष की तरह सर्वकामनाएँ पूर्ण करते हुए लौकिक-पारलौकिक अनेकानेक योगक्षेम वहन करते हुए करुणा कटाक्ष से संसारी जीवों का उद्धार करते रहते हैं। सन्तों में सदैव ईश्वर ही क्रियाशील रहते हैं। उनके हृदय में तो सदैव युगल प्रिया-प्रीतम व उनकी प्रेममयी लीलाएँ ही रहती हैं। वे सदैव लीलामय ही रहते हैं। सन्त अपनी करुणा पूरित दृष्टि से सभी जीवों पर उसकी भावना के अनुकूल कृपा संचार करते हैं। उनके स्मरण मात्र से ही हृदय में आनन्द का संचार होता है।

श्री देवीजी का जीवन त्याग एवं वैराग्य की अग्नि में तपा हुआ जीवन था। नर्मदा के बीहड़ों में निर्भय साधनारत रह विचरते समय भगवान श्री चन्द्रमौलि का 'प्रेरणा' सम्बल था ही। शंकर जी समय-समय पर आपका योग क्षेम वहन एवं संरक्षण करते भी रहे। घने जंगलों में अनिकेत विचरण के समय प्राय: शिवालय ही आपका आश्रय स्थल होते। शंकर जी का आदेश व संकेत सदैव सुखदायी ही होता रहा है। अपने 'घर' के जो ठहरे न! परिवार पर भी आपकी दृष्टि सदैव ही रहती है।

संसार से घोर विरक्ति, हृदय में भगवद् मिलन की तीव्र उत्कंठा, लक्ष्य प्राप्ती हेतु किन्हीं सिद्ध सन्त का चरणाश्रय प्राप्त होने की प्रबल कामना होने का ही परिणाम था कि आपको महेश्वर में परमपूज्य श्री महाराज जी जैसे सिद्ध सन्त का चरणाश्रय प्राप्त हुआ। तपोमय जीवन का ही फल था कि श्रीदेवीजी को प्रत्येक लीला दृश्य सहित मूर्तिमान होकर नेत्रों के सामने दर्शित होती रहती थी।

महेश्वर में टायफाइड की गम्भीर अवस्था में उन्हें दो बालक अपनी पिडुलिपीयों मध्य दिखायी देते थे। पूँछने पर बालकों ने बताया कि हम आपकी शक्ति हैं। आप कमजोरी के कारण बोल नहीं सकतीं-हिलडुल भी नहीं सकती तो हम घर के

सदस्यों को जो आपकी सेवा में है, आपको दवा व जल आदि पिलाने की प्रेरणा देने का कार्य करते हैं। किसी संत के जीवन चरित्र में इस प्रकार की अघटित घटना आश्चर्यमय है। इसी प्रकार भोपाल में श्री-श्रीजी के आपरेशन का भी आपको पूर्वाभास हो गया था। आपके जीवन में शारीरिक कष्ट बहुत आये किन्तु आपको विचलित होते कभी नहीं देखा।

गृहत्याग के समय श्री देवीजी कमरे में एक चित्र के पीछे पत्र लिखकर चली आयीं जिसमें लिखा था कि सात वर्ष बाद मिलूँगी। 1952 में पूजय श्री-श्रीजी ने श्रीदेवीजी से शिकारपुर पत्र लिखवाकर पिताजी को सपरिवार श्री वृन्दावन बुलाया तो मेरे लिए वह यात्रा वरदान बन गयी। श्री देवीजी का गृहत्याग, वैराग्य, विरक्ति, नाम जप और परमपूज्य श्री महाराज का चरणाश्रय एवं मेरी ओर उनका स्नेहिल कृपामय दृष्टि से निहारना मेरे जीवन का एक नवीन अध्याय बन गया और श्री देवीजी जो मेरी सहोदर अग्रजा होने के कारण पूर्वाश्रम में छोटी बहन को जो संस्कार दिया करती थीं, नृत्य आदि सिखाया करती थीं; मेरे लिए आध्यात्मिक जीवन का एक तेजोमय पुंज दिखायी देने लगीं। यह मेरा सौभाग्य ही था कि परमपूज्य श्री-श्रीजी ने मुझे भी अपना चरणाश्रय प्रदान किया।

बातें एक एक करके याद आ रही हैं। गंगा मन्दिर काल की एक दिन की बात है। राणापति घाट पर प्रतिदिन तीन बजे श्रीदेवीजी स्नान करने जाया करती थीं। उस दिन भी आँख खुली और बस यमुना स्नान को चल दीं। मध्यप्रदेश के एक व्यक्ति आये हुए थे वह साथ थे। यमुना जी पहुँच कर थोड़ी देर भजन करती रहीं। इसी बीच एक स्वर सुनायी दिया "ॐ भगवते वासुदेवाय"-इस स्वर में आकर्षण लगा और उसी समय यमुना स्नान की आवाज भी आयी। फिर वही स्वर सुनायी दिया "ॐ भगवते वासुदेवाय" और लगा कि जैसे कोई ऊपर की ओर जा रहे हैं। कुछ देर बाद आप भी स्नान करके गंगा मन्दिर वापस आ गयीं।

बात परमपूज्य श्री-श्रीजी के समक्ष रखी गयी। पूज्य श्री ने कहा वे कोई सिद्ध सन्त होंगे। उनका समय 2 बजे से 4 बजे का ही होता है। इसी प्रकार के अनेक प्रसंग-लीलाएँ हैं जिनका परिचय आप इस ग्रन्थ में यथा संदर्भ प्राप्त करेंगे ही।

इस आलेख का प्रयोजन मेरे द्वारा कोई आत्म लेखन करना नहीं है। यह सत्य है कि मेरे जीवन में भक्ति पथ का आकर्षण एवं श्री-श्रीजी के प्रति विशेष श्रद्धा का उदय श्री देवीजी के कारण ही हुआ। श्री देवीजी के ही कारण मुझे गंगा मन्दिर का दिव्य वातावरण एवं श्री-श्रीजी तथा परिकर का दुलार मिला।

श्री देवीजी का जीवन कठोर साधनामय था। इनकी विरक्ति का कोई उदाहरण नहीं!! इनके जीवन की अघटित घटनाएँ इनके उज्ज्वल जीवन को प्रकाशित कर रही हैं।

परम पूज्य श्री महाराज जी के चरणाश्रय में वेणु विनोद कुञ्ज का वह एक ऐसा

आध्यात्मिक प्रकाश स्तम्भ थीं जो कई साधक-साधिकाओं के लिए मार्ग प्रदर्शक बना। उनको लक्ष्य की ओर अग्रसरित किया।

किन्तु समय बीततेदेर नहीं लगती! यह लम्बी अवधि चुटकियों में बीत गयी। कहाँ दिन? कहाँ रात? अब समय बीतते जब भारी लगता है तो सोचा कि कितना समय बीत गया! इनके बिना सूना हो गया। एक-एक करके सभी चले गये! मैं जिनके लिए आई थी आज आँखों से ओझल हो गईं। आज मैं अपने को अकेला महसूस कर रही हूँ। गंगा मन्दिर की गम्भीर रहनी और गम्भीर सत्संग। सभी कुछ तिरोहित हो गया। वह उन्मुक्त हास्य, लीला चर्चा, जमुना किनारे की चर्चा बस केवल मन का मन्थन ही कर रही हैं।

आज "नीलमणि" की आभा आँखों से ओझल हो गई!

परिकर सूना कर चल दीं अपने प्राण-प्रियतम के नित्य बिहार में सम्मिलित होने। कुल का "दीपक" ओझल हो गया।

एक बात और विशेष थी उनके व्यक्तित्व की जिसे व्यक्त करना मैं अपना कर्त्तव्य समझती हूँ। अनन्त लीला का दिग्दर्शन होते हुए भी आपमें इसकी गन्ध भी नहीं थी कि मैं "कुछ" हूँ। सदैव सब में मिलकर रहतीं। कभी किसी छोटे से छोटे व्यक्ति, साधक-साधिका-बालक या बूढ़ा किसी से संकेत में भी नहीं चाहा कि 'मुझे प्रणाम क्यों नहीं किया"।

यदि कोई उनकी प्रशंसा करता था तो उनको प्रिय नहीं लगता था, संकोच होता था। एक बार बाराह घाट पर विराजमान एक उच्च कोटि के सन्त परमपूज्य श्री महाराज जी के जीवन चरित पर प्रवचन कर रहे थे प्रवचन श्रृंखला में परिकर का संदर्भ आने पर उनके श्रीमुख से श्री देवीजी के बारे में प्रशंसात्मक शब्द निसृत हुए जिनको सुनकर बहुत से श्रोता श्री देवीजी के दर्शनार्थ वेणु विनोद कुञ्ज आने लगे व प्रणाम् करने लगे। इससे श्री देवीजी को अत्यन्त असहजता हुई और पूज्य श्री के चरणों में गोपनीय संदेश भेजकर उनकी प्रशंसा न करने का प्रणत निवेदन किया।

उनके गुण अनन्त हैं। कहा भी है कि एक बार ईश्वरीय गुणों का वर्णन तो कदाचित सम्भव हो भी सकता है किन्तु सन्तों के गुणों का वर्णन करना असम्भव है-

सन्त चरित की गहराई को अब तक कोई पा न सका।
महिमा गालो कितनी ही पर पूरा कोई गा न सका।।

मैं जिनके लिए आयी थी, जिनकी प्रेरणा से आयी थी, जिनके कारण परमपूज्य श्री-श्रीजी जैसे रस सिद्ध चरणों का आश्रय मिला, श्री वृन्दावन वास मिला..... क्या नहीं मिला..... उनके श्री चरणों में कोटिशः नमन वन्दन के साथ-

शिकायत किस जुँवा से करूँ उनके जाने की,
यही अहसान क्या कम है कि मेरे दिल में रहते हैं।।

प्रणत निवेदन

दिनांक 15-7-2020 को प्रातः स्मरणीय पूज्या श्री देवीजी के युगल के नित्य विहार में सम्मिलित होने पर 05-8-2020 को साधु-वैष्णव सेवा के उपरान्त जब मुझसे श्री देवीजी के बारे में चरित लेखन का कहा गया तो मैं बड़े असमंजस में पड़ गया और लगा जैसे बुद्धि ने एक प्रकार से कार्य करना बंद कर दिया है। मैं मन्त्रहीन, क्रियाहीन, भक्तिहीन अविवेकी पामर श्री देवीजी जैसे संत के विषय में क्या लिखूँगा। बार-बार श्री गोस्वामी तुलसीदास जी की चौपाई याद आने लगी-

कवि न होऊँ नहि वचन प्रवीनू,
सकल कला सव विद्याहीनू।।
कवित्त विवेक एक नहिं मोरे,
सत्य कहऊँ लिखि कागद कोरे।।
जो अपने अवगुन सब कहऊँ,
बाढ़हि कथा पार नहिं लहऊँ।।

मैं कोई निर्णय करता कि तभी एक दिन 'श्री अलि' परिकर के मेरे एक शुभचिन्तक मिले। प्रस्तुत ग्रन्थ के लेखन के विषय में भी चर्चा हुई। चर्चा में भक्तमाल का एक प्रेरणादायक चरित उन्होंने मुझे सुनाया-

एक सिद्ध सन्त थे। (नाम मुझे स्मरण नहीं हो रहा है) उनके परिकर में कई विद्वान साधक थे। सन्त श्री अपने आपमें उच्च कोटि के विद्वान थे। उन्होंने एक ग्रन्थ लेखन का विचार किया जिसके लेखन हेतु योग्य पात्र का निर्णय करने हेतु साधक वर्ग में चर्चा की। गुरुजी के ग्रन्थ का लेखन कौन नहीं करना चाहेगा? अनेक विद्वानों ने प्रार्थना की कि यह पुनीत कार्य उन्हें करने की सेवा प्रदान की जाय। किन्तु गुरुजी ने किसी को स्वीकृति नहीं दी।

गुरुजी की सेवा में एक बिना पढ़ा-लिखा रसोइया उनकी प्रसादी तैयार करने की सेवा किया करता था। वह कढ़ी बहुत अच्छी बनाता था जिसे पाकर गुरुजी अत्यन्त प्रसन्न होते थे। उस रसोइया पर उनका बड़ा दुलार था। उन्होंने सभी से कह दिया कि मेरे ग्रन्थ लेखन का कार्य यह रसोइया करेगा। सभी अवाक्। गुरुजी के समक्ष बोलने का तो साहस था ही नहीं किन्तु मन में विचार अवश्य आता कि यह निरक्षर-काला अक्षर भैंस बराबर-अनपढ़ कैसे संस्कृत के ग्रन्थ का लेखन कर पायेगा? उस रसोइया ने भी गुरुजी के चरण पकड़कर अपनी अयोग्यता की विनती की किन्तु गुरुजी ने कहा 'चुप-तुम्हें बस

कलम पकड़नी है'। उन्होंने उस रसोइया में अपनी कृपा शक्ति का संचार किया और ग्रन्थ लेखन का कार्य सम्पादित हुआ। वास्तव में सन्त कृपा से कौन सा ऐसा कार्य है जो सुलभ नहीं हो सकता?

अति अपार जे सरितवर, जो नृप सेतु कराहि।

चढ़ि पीपीलिकऊ, परम लघु, बिनु श्रम पारिहि जाहि।।

फिर उन्होंने मुझसे कहा कि जिनका चरित है वे स्वयं लिखा लेंगे तुम्हें केवल कलम पकड़नी है-

भाषाबद्ध करवि मैं सोई, मोरे मन प्रबोध जेहि होई।।

ऐसा ही हुआ सच कह रहा हूँ। मेरा अपना प्रयास अपना विवेक, परिश्रम कुछ भी नहीं है क्योंकि

मैं शिशु प्रभु सनेह प्रतिपाला।

परमपूज्या श्री देवीजी के चरित लेखन का यह पुनीत कार्य जब लिखना प्रारम्भ किया तो श्रीदेवी जी के बारे में पुनः गोस्वामीजी की एक मानस चौपाई व गीता का एक श्लोक स्मरण हो आया-

राम अनन्त अनन्त गुण, अमित कथा विस्तार।

सुनि आचरजु न मानहि, जिनके विमल विचार।।

अद्वेष्टा सर्वभूतानां मैत्रः करुण एव च।

निर्मयो निरहंकारः सब दुःख सुखः क्षमी।।

(सम्पूर्ण भूत प्राणियों में द्वेषभाव से रहित हो, सबके साथ मित्रता का व्यवहार करे, मन में दया भरी हो, कहीं ममता न हो, किसी बात का अहंकार न हो, अपने दुख-सुख में समभाव रहे तथा अपना बुरा करने वाले को भी अभय दान देकर उसका भला करे।)

सबसे न्यारे सबके प्यारे, ऐसी रहनी रहिये,

निन्दा स्तुति वो परायी, जुगल जीव जस कहिये।

हानि लाभ दुख सुख राग बरते, आनि परे सो साहिये,

'भगवत रसिक' सरन गहि वल्लभ सर्वोपरि सुख लहिये।।

शास्त्रों में वर्णित भक्ति, भगवान पर निर्भरता, निर्भयता, ज्ञान, वैराग्य, करुणा, निर्जन प्रियता, अनिन्दा और शास्त्र विधा से ऐसा कौन सा गुण था जो श्री देवीजी के व्यक्तित्व में नहीं था। उनकी कथनी, रहनी, करनी अनुकरणीय थी। वह ब्रज रस प्लावित ऐसी रसालिका थीं जिनका रोम-रोम रसाप्लावित सदैव रहता था और जिसकी सुगन्ध पूरे वातावरण में व्याप्त रहती थी।

एक बार वेणु विनोद कुञ्ज में पूज्य श्री महाराज जी के कक्ष के बाहर बरामदे में पूज्य श्री ठाकुरजी (श्री घनश्यामदास जी) व श्री विद्याधर सराफ दोपहर के समय बैठे थे। चंचल स्वभाव वश श्री विद्याधर जी ने श्री ठाकुरजी से प्रश्न किया 'ठाकुरजी! सन्तों की मस्ती कैसी होती है? श्री ठाकुरजी कुछ उत्तर देते कि उसी समय श्री देवीजी अपना निधिवन का नाम जप पूरा कर कुञ्ज के दरवाजे पर प्रवेश कीं। नाम जप एवं निधिवनराज में हुई अनुभूतियों की मस्ती उनके चेहरे एवं आँखों से झलक रही थी। श्री ठाकुरजी ने तुरन्त कहा "विद्या! ले करले सन्त मस्ती के दर्शन।" श्री देवीजी की निधिवनराज एवं अन्य साधनाकाल की अनुभूतियां 'रस निर्झर' शीर्षक के अन्तर्गत वर्णित हैं। इसके अतिरिक्त कई सन्त-विद्वानों एवं भक्त परिकर ने भी अपनी अपनी जानकारी के अनुसार यथा स्थान लिपिबद्ध किया है।

पाठकों की सुविधा हेतु ग्रन्थ सामिग्री को चार शीर्षकों के अन्तर्गत प्रस्तुत करने का प्रयास किया है-

(1) संक्षिप्त जीवन वृत्त (2) सन्त विद्वानों द्वारा अर्पित भाव प्रसून (3) परमपूज्य श्री महाराज जी का चरणाश्रय प्राप्त होने के बाद का जीवनकाल रस निर्झर शीर्षान्तर्गत (4) भक्त परिकर द्वारा अर्पित श्रद्धासुमन।

मुझे इस बात का अन्र्तमन से अहसास है कि इस ग्रन्थ के प्रस्तुतीकरण में अनेक कमियाँ हैं या यों भी कहें कि कमियाँ ही कमियाँ हैं तो भी अतिशयोक्ति नहीं होगी। यह भी कटु सत्य है कि वे कमियाँ किसी की नहीं सिर्फ और सिर्फ मेरी ही हैं। जिनके लिए मैं सुधी पाठक वृन्द के चरणों में क्षमादान हेतु प्रणत निवेदन करता हूँ। जिस प्रकार घनघोर काले बादलों के मध्य सुनहरी विद्युत आभा छिपी रहती है मुझे भी सुखानुभूति है कि पूज्या श्री देवीजी ने मुझे यह सेवा करने का अवसर प्रदान किया। शायद गोस्वामी तुलसीदास जी ने मुझ जैसे पामर को दृष्टिगत करते हुए ही लिखा होगा-

निज कवित्त केहि लाग न नीका, सरस होऊ अथवा अति फीका।
जे पर अनिति सुनत हरषाहीं, ते वर पुरुष बहुत जग नांहीं।।

एक गुरुतर उत्तरदायीत्व का निर्वहन और करना मैं अपना कर्त्तव्य समझता हूँ। जिन सन्त-विद्वानों एवं भक्त परिकर ने ग्रन्थ रचना हेतु अपने संस्मरण, भाव, आलेख प्रेषित किये हैं उनके चरणों में आभार सहित प्रणाम निवेदन है। आपके द्वारा प्रेषित श्री देवीजी के विभिन्न आयामों का जो दिग्दर्शन हुआ वह अमूल्य है। वेणु विनोद कुञ्ज की वह अमूल्य थाती है। आने वाले साधक वर्ग के लिए वह प्रेरणाश्रोत होगा। श्री चन्द्रमौलि सेवा समिति शिकारपुर ने आर्थिक सहयोग प्रदान कर ग्रन्थ प्रकाशन में अनुष्ठानिक समिधा दी उसके लिए धन्यवाद अथवा आभार प्रदर्शन शायद उचित नहीं होगा क्योंकि

यह संस्था प्रातःस्मरणीय परमपूज्य श्री महाराज जी द्वारा ही स्थापित, संरक्षित एवं शिशुवत पालित-पोषित संस्था है और संस्था द्वारा समयोचित कर्त्तव्य का निर्वहन किया गया है हाँ चौधरी प्रेस के कर्णधार श्री मनोज चौधरी अवश्य बधाई के पात्र हैं जिन्होंने अथक परिश्रम कर ग्रन्थ प्रकाशन में सहयोग किया।

एक बार पुन: आप सभी के चरणों में बारम्बार प्रणाम करते हुए निवेदन कर रहा हूँ कि जहाँ तक त्रुटियों का प्रश्न है वे अपार हैं अनन्त हैं और इस प्रयास में उचित योग्यता का अभाव भी है किन्तु भाव यही रहा है-

"तदेव साध्यताम्, तदैव साध्यताम"

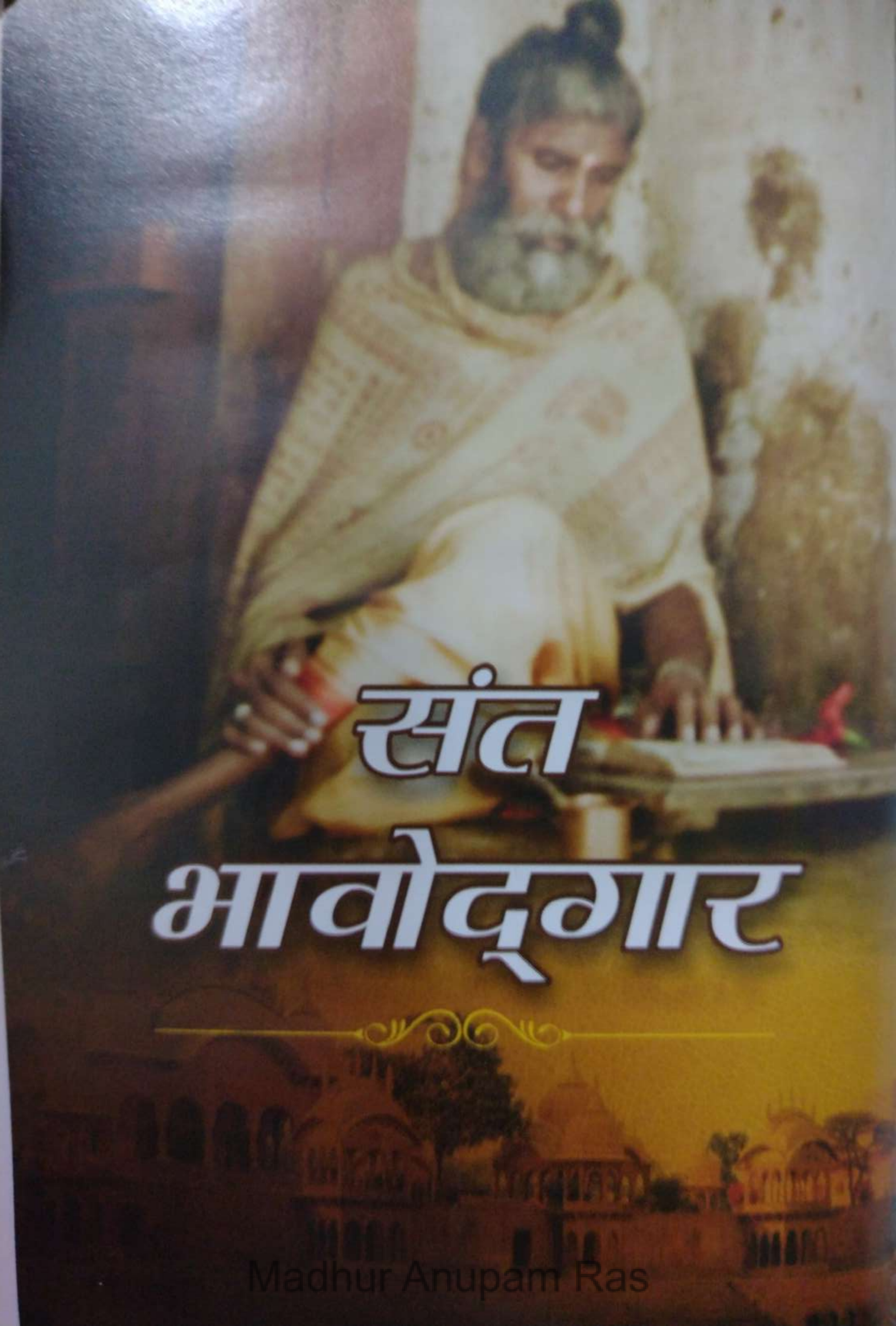
पूज्या श्री देवीजी के संदर्भ में कबीरदास जी की एक पंक्ति का उल्लेख करते हुए मैं अपनी वाणी को विराम दे रहा हूँ वह इसलिए नहीं कि उनके गुण समाप्त हो गये हैं वरन् इसलिए कि वाणी या तो थक गई है अथवा आगे वर्णन करना उसकी सामर्थ्य नहीं है-

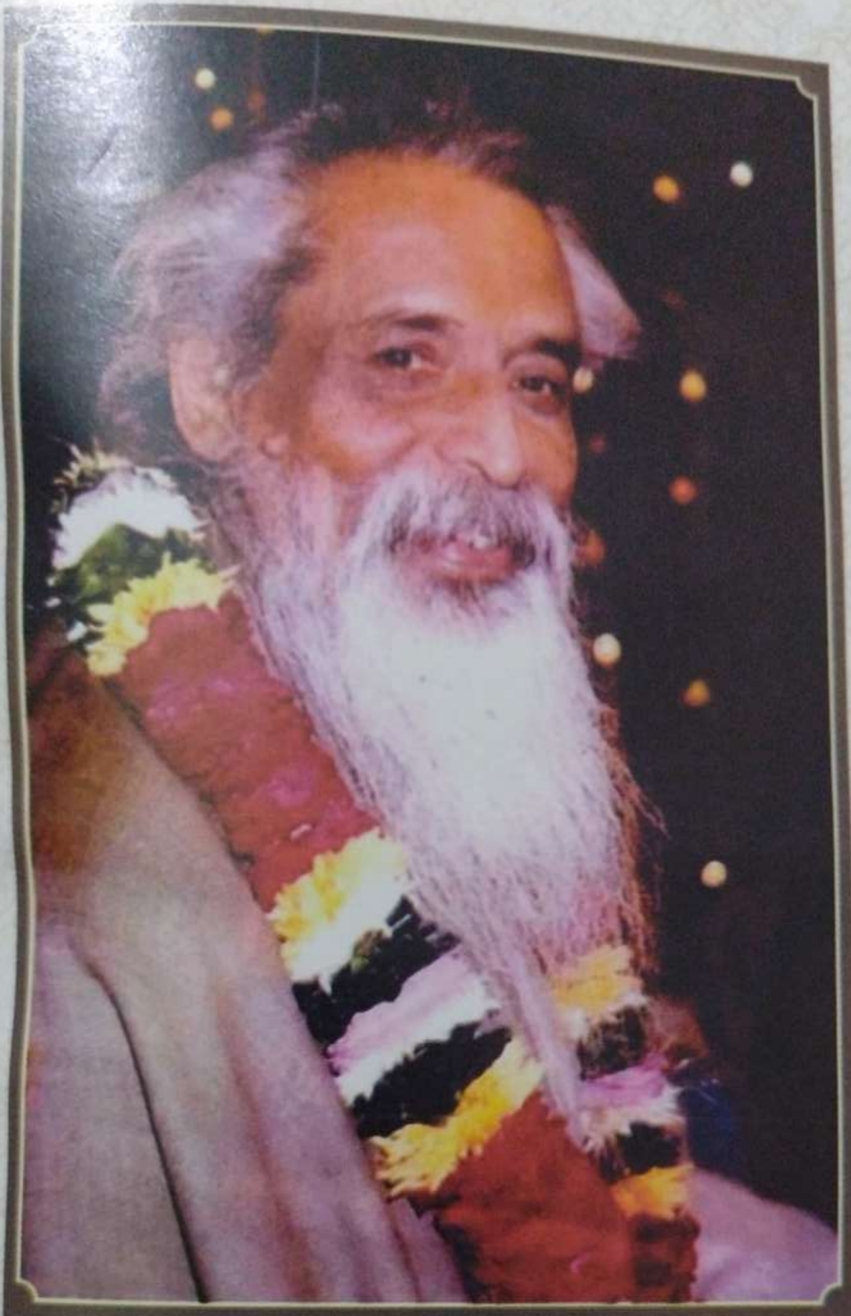
चदरिया झीनी रे झीनी
दास कबीर जतन से ओढ़ी ज्यों की त्यों धर दीनी चदरिया।

चरणरज किंकर दासानुदास
शिवकुमार गोयल (श्याम)
वेणु विनोद कुञ्ज, वृन्दावन



Madhur Anupam Ras


संत
भावोद्गार



सन्तों की वाणी में, श्री वंशी की मीठी वाणी में अन्तर नहीं है, बल्कि प्रधान स्थान लेती है संतों की वाणी।

याद रखना, अपात्रों में अपात्र बनकर श्रीकृष्ण से पृथक, सर्वथा भिन्न वस्तुओं से आसक्त होकर, अपने सत्पात्र रूप से विमुख, विस्मृत होकर चिर सुहृद प्राणों के नाथ के मधु सम्मिलन से वंचित होते जा रहे हो।

-श्री महाराज जी



पूज्य सन्त पं. गया प्रसाद जी
(गोवर्धन)

"बहिन! देखो श्री महाराज जी के प्रेम में तुम्हारी जो दशा हुई है, हमको उसका यहाँ सब अनुभव हुआ है। तुमको यह अमोघ निधि मिली है सम्हालकर रखना"।

पूज्य पण्डित जी का नियम था कि वे स्त्रियों से बात नहीं करते थे, तथा चरण स्पर्श भी नहीं कराते थे, परन्तु श्रीदेवी जी को वे बहिन कहकर पुकारते थे व सामने बैठाकर बात करते थे।

श्रीमहन्त श्री किशोर देव जू महाराज
(ठा. गोरेलाल कुंज, वृन्दावन)

सींच्यौ सुर सारद औ
नारद उलीच्यौ याहि।
यह ब्रज भूमि जानौ
खेत रसिकन कौ है।।



श्री मलूक पीठाधीश्वर जगद्गुरु द्वाराचार्य स्वामी

डॉ. राजेन्द्र दास देवाचार्य जी महाराज

(वृन्दावन)

॥ श्री हरिः शरणम्॥ दि. 19/07/2021



अबला शरीर साधन सबल, श्रीदेवीजी निकलंक रहीं॥
देह गेह रति त्यागे, भयी हरिपद अनुरागी।
जग प्रपञ्च ते दूर, शूर भजनानन्द भागी॥
श्रीजी अलि पद पाइ, सहचरी वपु शुभ पायो।
वृन्दावन निधिराज भजन हरि रास दिखायो॥
हरि गुरु सन्तनि मान दृढ़ ब्रज रज वन ब्रज में रही।
अबला शरीर साधन, सबल श्रीदेवीजी निकलंक रहीं॥

-राजेन्द्र दास



बाबा श्री मनोहर दास जी

(वेणु विनोद कुंज, वृन्दावन)

"श्रीदेवी जी का दृढ़ संकल्प ही इनके प्रकाशित होने में प्रधान कारण है। पहले तो वे श्रीजी की कृपा से, स्व-स्वरूप से, गहराई से इसका आस्वादन करती आ रही है। श्रीजी की कृपा से उन्हें यह आस्वादन प्राप्त है और उन्हीं की अन्तरंग प्रेरणा से उन्होंने इसे छपवाने का गहन प्रयास किया है। आज दस साल के उनके अथक परिश्रम से आपके सामने ये ग्रन्थ रत्न प्रस्तुत हो रहे हैं।

इधर कुछ वर्षों से उनका स्वास्थ्य अत्यधिक खराब चल रहा है। इस स्थिति में सब कष्टों को सहन करते हुए भी उन्होंने अपने संकल्प को पूर्ण किया है। उनके स्वास्थ्य को देखते हुए यह कार्य अत्यन्त असम्भव सा प्रतीत होता था परन्तु श्रीजी की कृपा से उन्होंने इसमें सफलता प्राप्त की है"।



पूज्य संत घनश्याम दास शर्मा
(श्रीठाकुर जी)

"पहले तो 'पूज्य चरण' अपने अनुभवमय लेखों को सुनाकर फाड़ देते थे। हम सबको बड़ा कष्ट होता था। तब पूज्या देवी जी ने ही साहस करके श्रीजी से आग्रह किया कि इन लिखित सत्संगों को नष्ट न करें, पुनः पुनः मनन करने के लिये रहने दें। यह हम लोगों की एक निधि रहेगी। पूज्य श्रीजी ने स्वीकार किया। आज जो भी यह ग्रन्थ आप सब के हाथों में है, इसका पूर्ण श्रेय पूज्या श्रीदेवी जी को ही है। शुरु से अन्त तक पूरा परिश्रम इन्हीं का है। इनके लिये कुछ भी कहते नहीं बनता। वर्षों-वर्षों की लिखित सामिग्री जो उनके कर-कमलों से लिपिबद्ध की गयी थी। उसी के मुद्रण का सुअवसर आज प्राप्त हो रहा है। इस प्रकार के और भी 5-6 ग्रन्थ बन सकेंगे। इतनी सामिग्री अभी शेष है। "उनका" अनुग्रह होगा तो क्रमशः प्रकाशित होते रहेंगे। अभी तक प्रकाशित न होने में उनके स्वभाव की गोपनीयता ही कारण रही, जिससे उनकी प्रत्यक्ष उपस्थिति में हम कुछ भी नहीं कर सके।

कई माह रुग्ण अवस्था के पश्चात् भी अथक परिश्रम करके ग्रन्थ हमारे हाथों तक पहुँचाने वाली श्रीदेवी जी के विषय में तो कुछ कहते ही नहीं बन रहा है।

बाबा श्री अलबेली शरण जी
ललित कुंज, ठा. गोरेलाल कुंज, वृन्दावन



"श्रीदेवी जी का जीवन आदर्श साधना में रहा। त्याग, वैराग्य, संयममयी भजननिष्ठा, धामनिष्ठा, श्रीगुरु सेवनमयी दृढ़ निष्ठा, इष्ट सेवनमयी निष्ठा आदि निष्ठायें उनमें भरपूर थी। श्रीमहाराज जी सत्संग श्रवण करना, श्रीबिहारी जी के दर्शन करने जाना आदि आपका सहज स्वभाव था।

डॉ. शरण बिहारी गोस्वामी

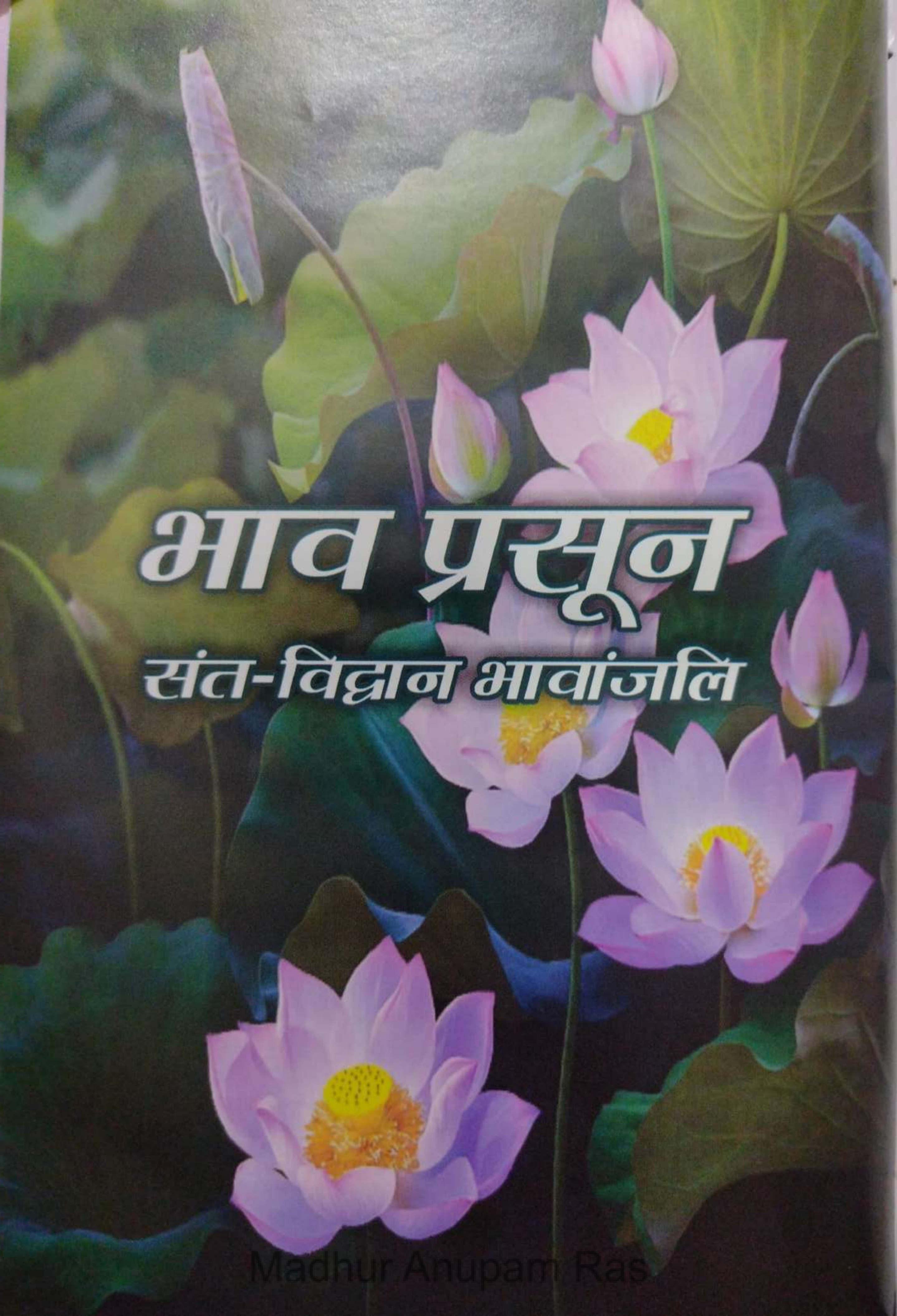
पूर्व कार्यकारी उपाध्यक्ष उ. प्र. हिन्दी संस्थान, लखनऊ



"एक बात और; महापुरुष आते हैं, चले जाते हैं। स्मृति में छोड़ जाते हैं, अपनी कृतियाँ, अपने उदार-चरित्र, परन्तु बिरले ही ऐसे होते हैं जो अपने रस समुद्र से अपने प्रिय जनों के हृदयों को भर जाते हैं। परम आदरणीय ठाकुरजी श्री घनश्यामजी, भक्तिमती देवी जी एवं पूज्य बाबा मनोहरदास जी उस रस से आप्लावित हो इस वृन्दावन को रसमय बना रहे हैं। इन रसघन मूर्तियों को सादर नमन के साथ।"



पूज्य श्री महाराज जी का जन्मोत्सव
वेणु विनोद कुंज, वृन्दावन



भाव प्रसून

संत-विद्वान भावांजलि



आन्तरिक अनुभूतिपूर्ण आह्लाद की भावुक स्थिति में पूज्या श्रीदेवी जी।

वात्सल्य मूर्ति श्रीदेवी जी

भागवत प्रभाकर श्रीवैष्णवाचार्य मारुतिनन्दन वागीश जी
अध्यक्ष-आचार्यपीठ, संस्थापक-भागवत पीठ, वृन्दावन

शैले-शैले न माणिक्यं मौक्तिकं न गजे गजे।
साधवो नहिं सर्वत्र चन्दनं नहि वने-वने ॥

प्रत्येक पहाड़ पर माणिक नहीं, प्रत्येक हाथी में गुजमुक्ता नहीं एवं प्रत्येक जंगल में चन्दन नहीं होता, उसी प्रार सन्त दर्शन सब जगह नहीं मिलता। वात्सल्य की साकार मूर्ति परम वन्दनीया, पूजनीया श्रीदेवी जी का संस्मरण हृदय को आल्हादित कर देता है। "के सन्ति सन्तो खिलवीतरागा अपास्त मोहा शिव तत्वनिष्ठा" जिनकी समस्त विषयों से रागात्मक वृत्ति परावृत और परांमुख हो गई हो, जिनका मोह नष्ट हो गया हो और भगवत तत्व में अनन्य निष्ठा हो गई हो, यह लक्षण पूज्या श्रीदेवी जी के दिव्य सौम्य स्वरूप में दृष्टिगोचर होता था। ब्रजवासी विप्रजनों के प्रति आदरणीय पूज्या श्री विलक्षण भाव आज भी स्मरण आता है। यह शरीर तो अबोध अवस्था से प्रातःस्मरणीय पूज्यपाद महाराज श्री एवं परम वन्दनीया देवी जी महाराज के वरद एवं वात्सल्य की छत्रछाया में रहा है, सौभाग्य से बाल्यावस्था में ही श्रीमद्भागवत पारायण के वाचन को श्रवण कर पूज्यनीया देवी जी महाराज ने अपनी वात्सल्यमयी दृष्टि से मंगलाशासन प्रदान कर कृतकृत्य कर दिया।

निरन्तर नाम साधना में रत परम भागवत (भक्त) के दिव्य लक्षण पूज्या देवी जी महाराज में साकार दिखाई देते थे।

निरपेक्ष मुनिं शानतं, निर्वैरं समदर्शनम्।
अनुव्रजाम्यहं नित्यं, पूयेयेत्यंऽध्रि रेणुभिः।।

ऐसे दिव्य लक्षण सम्पन्न भक्तों के पीछे स्वयं श्री वेणु विनोद बिहारीजी धावन करते हैं कि उनके पावन चरणों की धूल मिल जाये।

सहजता, सरलता एवं सौम्यता की प्रतिमूर्ति परम वन्दनीया पूज्या श्रीदेवी जी महाराज अपने दिव्य अलौकिक स्वरूप से श्रीराधा वेणु विनोद बिहारीजी की नित्य कैंकेर्य में रहते हम सभी पर अपनी करुणा एवं वात्सल्यमयी दृष्टि बनाये रखें ऐसे दिव्य शक्ति स्वरूपा साध्वी पूज्या श्री देवी जी महाराज को कोटिशः नमन-वन्दन!

महा महिमामयी पूज्या श्री देवीजी

-कृपा परिपोषिता शशि कला
वृन्दावन

"निधिवन की साम्राज्ञी आ गईं" ये शब्द पू. श्री महाराजजी के हैं, जब वे निधिवन से अपने "तीन लक्ष्य महामन्त्र जाप" का नियम पूरा करके भर दोपहरी में कुंज में आकर पूज्य श्री जी के चरणों में अवनत हुईं। सौभाग्य से तब मैं पू. श्री महाराज जी के कक्ष में ही बैठी हुई थी। पूज्य श्री जी के उपरोक्त उद्‌गार पू. देवीजी की अनवरत साधना एवं व्रजसुन्दर के प्रति उनकी अपूर्व आन्तरिक लगन को ही प्रकट करते हैं।

ईश्वर की यह मायामय प्रकृति भी किस तरह सन्त महापुरुषों के अनुशासन में रहती हैं इसका पूज्या देवीजी के व्यक्तित्व में मैंने प्रत्यक्ष अनुभव किया है। पूज्या देवीजी सुबह ही अपनी मालाझोली उठाकर निधिवन चली जाती थीं एवं वहाँ एकासन से बैठकर तीन लक्ष्य महामन्त्र "हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे, हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे" का जाप पूरा करके वेणु विनोद कुंज में आती थीं। तदनंतर ही प्रसाद आदि पाती थीं।

एक घटना का स्मरण किए बिना नहीं रहा जाता। तब मैं म. प्र., निमाड़ में कन्या विद्यालय में अध्यापन कार्य करती थी। ग्रीष्मावकाश प्रायः मैं वृन्दावन में ही व्यतीत करती थी। एक दिन मैंने निधिवन जाते समय पू. देवीजी से प्रार्थना की "मुझे भी साथ ले चलिए, मैं वहाँ बैठकर जाप करूँगी"।

पू. देवीजी मुझे साथ ले गईं एवं एक बड़ी लता के नीचे मुझ बिठा कर कहा "यहाँ बैठकर जब तक तुम्हारा मन लगे, जाप करना। डरो मत, बन्दर कुछ नहीं करेंगे" और वे स्वयं एक सघन लता जाल में घुसकर मेरी दृष्टि से ओझल हो गईं। मैंने तो सोचा था, देवीजी मुझे अपने पास ही बिठाएंगी। वैसे मैं महाडरपोक हूँ पर देवीजी की आज्ञानुसार नाम लेने बैठ गई। कुछ ही समय के पश्चात् बड़े बड़े आठ दस बन्दर एक एक कर आकर मेरे चारों ओर गोल घेरा बना कर बैठ गए और मुझे देखते रहे।

परम आश्चर्य, मुझे जरा भी भय नहीं लगा। मैं निश्चिन्तता से नाम लेती रही। कुछ समय पश्चात् वे सब बन्दर जैसे आए थे वैसे एक एक कर चले गए। यह सब पूज्य देवीजी की कृपा का ही प्रभाव था। गुरु निष्ठा, नाम निष्ठा एवं धाम निष्ठा का अपूर्व त्रिवेणी संगम जिनके प्रखर साधनामय जीवन में परिलक्षित होता है, ऐसी महामहिमामयी पूज्या देवीजी के श्रीचरणों में कोटिशः नमन करते हुए कुछ टूटी फूटी पंक्तियों में अपनी श्रद्धा के भावसुमन उन्हें अर्पित करती हूँ।

एक रागिनी अनगायी है, 'सांवर' के मन को भायी है।
पूर्ण समर्पण के वर्णों से, लिखि हुई यह पाती है।।1।।
गुरुनिष्ठा की गहक महक, वेणुकुंज में लायी है।
'मौन साधना' की सौरभ ने, जनमानस महकाया है।।2।।
उज्ज्वल दीप शिखा सी सबका, पथ आलोकित करती थीं।
सतसंग सुधा की निर्झरणी, जिनके अन्तस में बहती थी।।3।।
श्रीजी के पदचिन्हों पर, जो नयन बिछाए रहती थी।
उनके अमर सन्देशों की, देवीजी मधुर गायिका थी।।4।।
'वेणु कुंज' की शोभा, आभा, वें "स्वस्वरूप समलंकृत" थीं।
सुरसरिवत् अति ही निर्मल, संत जगत् की गरिमा थीं।।5।।
अपनी ममता की छाया से, सबको सरसाये रहती थीं।
उनकी सरल सुनिश्चल रहनी, हम सबकी एक धरोहर थी।।6।।



ठा. श्री वेणु विनोद बिहारी जी को लाड़ लड़ाती पूज्या श्रीदेवी जी।

जेहि तो दिवसा गता

सुश्री दर्शन
बड़ी कुंज, वृन्दावन

कैसा मधुरिम मण्डल था, रसमय सुयोग था। श्रीश्री महाराज जी अपने परिकर सहित, श्रीघनश्याम भैया, पू. श्री देवी जी, श्री कुसुम बहिन जी, मनोरमा बहिन जी, श्री ऊषा बहिन जी (पू बोबो) के पास सहज ही कृपा करके चले आते थे। उस समय आनन्द का स्रोत मानों वह निकलता था। हम सब भाई बहन आनन्दातिरेक से नाच उठते थे। उस सुख का वाणी द्वारा वर्णन करना कठिन है। फिर उनका सत्संग उसको क्या कहें ? वह रस सम्हाले नहीं सम्हलता था। उसी आनन्दाम्बुधि में डूब, उच्छलित रसहिलोरों में डूबते-उतराते कई दिन बीत जाते थे।

श्री घनश्याम भैया की संगीत की तान तरंगों में लहरान्वित मन किसी अलौकिक रस साम्राज्य में पहुँच जाता था।

परम पूज्यनीया श्रीदेवी जी के विषय में क्या वर्णन करें। वाणी मूक, हृदय स्तब्ध है। उनका जीवन घोर तितिक्षामय था।

समस्त लौकिक कुलमर्यादा की श्रृंखलाओं को तोड़कर, रात्रि के 12 बजे, निबिड़ अन्धकार घोर वर्षा में दोनों बहने लक्ष्य प्राप्ति हेतु, गृह त्याग कर निकल पड़ी। अन्धकार के कारण मार्ग दीख नहीं रहा था, पाँव में काँटे चुभ रहे थे। इसी प्रकार पच्चीस मील का रास्ता तय करके प्रात:काल श्रीगंगा तट पर स्थित अनूप शहर पहुँच गई।

गृह त्याग के बाद कुछ समय ब्रज स्थलियों में भी विचरण करती रहीं। श्री मानसी गंगा (गोवर्धन) पर रहते हुए आठ दिन तक केवल एक चुल्लू जल पीकर रही।

सहसा महेश्वर जाने का सुयोग्य बना। वहाँ श्रीश्री महाराज जी, श्री मनोहरदास जी (पू. भैया) सहित श्री अवन्तिका बाई नाम की, वल्लभ कुल में दीक्षित, प्रधान अध्यापिका के यहाँ ठहरे हुए थे। वहाँ श्री महेश्वर निवासी श्री बाबूलाल कन्डेक्टर 18 वर्ष की संन्यासी वेषधारिणी एक बालिका को साथ लेकर आए श्रीजी के दर्शन करने। उस बालिका पर दृष्टि पड़ते ही श्री महाराज जी ने पू. भैया को संकेत किया-यही वह बालिका है जो दो बार मुझे स्फुरित हुई थी।" श्रीदेवीजी अवन्तिका जी के घर पर श्रीजी के सान्निध्य में 15 दिन रहीं। यहाँ रहते हुए श्रीजी के भावमूर्च्छा, कीर्तनावेश में नृत्य, विचित्र भाव स्थिति देखकर, श्रीदेवी जी के मन पर गहरा प्रभाव पड़ा। वे श्री महाराज जी

के साथ श्री वृन्दावन आ गई। श्रीमोतीराम जी तथा माँ जी के आश्रय में, श्री गंगा मन्दिर में रहने लगीं।

श्री वृन्दावन आकर तो श्री महाराज जी के सान्निधि में रातदिन सत्संग का सुख समेटने लगी। कुछ वर्ष श्री गोपाल मन्दिर में रहे। पुनः श्री वेणुविनोद कुंज में आकर रहे।

यहाँ श्रीश्री महाराज जी का जन्मोत्सव बड़ी धूमधाम से मनाया जाता था। कई बार 200-300 भक्तजन बड़वानी से आ जाते। पूरी व्यवस्था का भार इन्हीं पर था।

श्री वृन्दावन आकर भी प्रायः श्री गिरिराज जी जाकर रहती। श्रीरामदयाल जी पण्डे के यहाँ ठहरतीं। उन्होंने हमें बताया कि श्रीदेवीजी छत पर बाहर की मुंडेर पर रात भर बैठी रहतीं। मैं डरता था कि कहीं नींद आने पर नीचे न गिर जायें, मैं चारों ओर घूमता रहता था।

एक बार मैं बरसाना घातरिया धर्मशाला में एक कमरे में ठहरी थी। श्रीदेवीजी पास के कमरे में थी। प्रातःकाल मेरे कमरे में श्री ठाकुर जी के दर्शन करने आई, बहुत प्रसन्न हुई। कहने लगी 'श्रीहित चौरासी' में पढ़कर देखना - विहरत दोऊ प्रीतमकुंज' बहुत लम्बी लीला है, मुझे बहुत अच्छा लगा उनके दर्शन करके।

आज भी उनका अमित लाड़ था हम सभी बहनों पर।

वे एकबार अपनी स्नेहमयी दृष्टि हम पर डालती, लगता था मानों सब भजन का फल हमें मिल गया, हम निहाल हो जाते।

अब तो वे 15 जुलाई, 2020 को अपने नित्य लीला परिकर में सम्मिलित हो गई।

उनके श्रीचरणारविन्दों में यही प्रार्थना है कि हम अल्पातिअल्प जीवों पर भी अपनी करुणा दृष्टि द्वारा श्रीयुगल चरणारविन्दों की रति प्रदान करें।

किसी की दी हुयी अनन्त नीचताओं को अनन्त बार क्षमा करते हुए, बदले में अनन्त काल तक प्यार देते रहना सन्त का स्वभाव है।

-प. पू. श्री राधाबाबा, गोरखपुर

श्रीदेवी माता जी को भावभीनी श्रद्धाञ्जलि

भागवताचार्य श्रीकृष्णमुरारी शास्त्री
नवनिकुञ्ज, संत कालोनी, वृन्दावन

पूज्य माताजी के विषय में कुछ कहना-लिखना भुवन भास्कर सूर्य नारायण को दीपक दिखाना है। परन्तु श्रद्धेय जनों का प्रेम भरा आग्रह है।

सर्वप्रथम पूज्य माताजी के दर्शनों से प्रत्येक बार एक नई ऊर्जा मिलती है। एवं मार्गदर्शन मिलता है। उनका अगाध अगाध स्नेह सबके प्रति उनके रोम-रोम में था मेरे भागवती जीवन में उनकी बहुत-बहुत कृपा आशीर्वाद है। मेरी पुत्री वंदना के जीवन में उनका बड़ा आशीर्वाद है। मेरे परिवार के प्रत्येक सदस्य की चिन्ता करना देखभाल करना प्रेम भरा वात्सल्य देती थी उनका नेत्रों से ओझल होना मेरे लिए मर्माहित है। भजन साधन तो अधिकांश साधक करते ही हैं। परन्तु साधना के माध्यम से श्रीकृष्ण तक पहुँचना ये पूज्या माताजी को सहज में प्राप्त था।

पू. माताजी उच्च कोटि की साधिका थी। उच्च कोटि परम सिद्ध अवस्था में भी इन नयनों से उन्होंने न जाने कितने बार प्रिया-प्रियतम को निहारा था ये कहा नहीं जा सकता। माताजी वृन्दावन की सहचरी लता-वल्लरी थी जैसे आनंदमयी माँ। श्रीमद्भागवत महापुराण में जिन संतों का वर्णन है उन्हीं में पूज्य माताजी थीं। श्री महाराज जी के प्रति उनकी अद्भुत निष्ठा अनिवर्चनीय थी इसलिए महाराज जी के द्वारा उनको वह वस्तु प्राप्त थी जो अगम्य है। 'जै चाहै वो नंदलाला, बाँकेबिहारी राधारानी'। धाम निष्ठा तो उनकी बड़ी दिव्य है। जो साधकों के लिए मार्गदर्शन होगी। मैं जब भी वेणु विनोद कुंज में जाता यही कहती महाराज जी यहाँ साक्षात् विराजमान हैं।

उनके श्री चरणों में कोटि-कोटि वंदन नमन।



गुरुवर्य श्रीदेवी जी

-श्री विद्याधर दास
वेणु विनोद कुञ्ज

ध्येयम् सदा परिभवघ्नमभीष्ट दोहं
तीर्थास्पदं शिव विरञ्जीनुतं शरण्यं,
भत्यार्तिहं प्रणतपाल भवाधि पोतं
वन्दे महापुरुष ते चरणारविन्दनम् ॥
यं ब्रह्मा वरुणेन्द्र रुद्रमरुतः,
स्तुन्वन्ति दिव्यै स्तवैः
वेदै साङ्गपद क्रमोपनिषदै,
गायन्ति यं सामगाः
ध्यानावस्थित तद्गतेन मनसा।
पश्यन्ति यं योगिनो,
यस्यान्तं न विदुः सुरगणाः
देवाय तस्मै नमः ॥

अखिल ब्रह्माण्डनायक, कोटिकदर्पलावण्य माधुर्य वारिधि, मदांगतरंग भंगी, शुभगशीतल कोमल चरणारविन्द, मुरली वादन पटु, मुरली मनोहर के मधुर कमल चरणारविन्दों में श्री ब्रजेन्द्रनंदन, श्री श्यामसुन्दर एवं लावण्यमृतसिन्धों माधुर्य की मूर्ति करुणा की सागर श्री वृषभानुनंदिनी श्री राधाजी के चरणकमलों में बारम्बार साष्टांग लोटागण। रसवारिधि निमग्न, करुणावरुणालय, परम पूज्य श्री श्री 108 श्री महाराज जी के चरणकमलों में बारम्बार दण्डवत प्रणाम।

परम पूज्या, मेरी गुरुवर्य श्रीदेवीजी के चरणकमलों का कृपानुरागी मैं उनका दास उनको प्रणाम करता हूँ।

परम पूज्या श्री रमादेवी जी, यह नाम श्रुतियों में पड़ते ही एक अलौकिक, दिव्य, रसमयी लहरियाँ हृदय में आन्दोलित होती रहती हैं। परम पूज्य श्री श्री 108 श्री महाराज जी की परम कृपापात्रा पूज्या देवीजी एक भगवत् प्राप्त (सखी स्वरूप) संत थीं। परम पूज्य श्री श्री महाराज जी के जीवन चरित्र में यह उल्लेखित है।

परमपूज्या देवीजी हर समय परमपूज्य श्रीश्री महाराज जी से सखी स्वरूप प्रदान करने की प्रार्थना करती रहती थीं। उनकी यह लालसा इस प्रकार पूर्ण हुई :- यह बात कोई वर्ष 1947 के आसपास की होगी, उस समय परमपूज्य श्रीश्री महाराज जी गंगा मंदिर, वृन्दावन में विराज रहे थे साथ ही पूज्या देवीजी, पूज्य श्री मनोहर जी, पूज्य श्री मोतीराम जी एवं पूज्या माजी भी वहाँ वास करते थे। एक बार परमपूज्य श्रीश्री महाराज जी दोपहर के समय बाहर से घूमकर के मंदिर में पधारे और उन्होंने खिचड़ी खाने की इच्छा प्रगट की। पूज्य श्री श्रीदेवीजी को 102 डिग्री बुखार था परंतु उन्होंने अपने स्वास्थ्य की परवाह न करते हुए, उठकर बड़े मनोयोग से खिचड़ी बनाई एवं परमपूज्य श्रीश्री महाराज को प्रेम से पवाई। खिचड़ी खाने के बाद परमपूज्य श्रीश्री महाराज जी ने मुख एवं हस्त प्रक्षालन किये एवं पूज्या श्री श्रीदेवीजी की ओर परम मुस्कराहट के साथ देखा। पूज्य देवीजी अपने कक्ष में विश्राम करने चली गईं तो उन्होंने उन्हें दिव्य "सखी स्वरूप" की अनुभूति हुई और वे घंटों उस भाव साम्राज्य में डूबी रहीं।

इसी प्रकार एक बार होली के समय में परमपूज्य श्रीश्री महाराज जी श्री श्रीबिहारीजी के मंदिर में गये थे वहाँ गोसाईंजी ने उन्हें नख से शिख तक श्री श्रीबिहारीजी के प्रसादी रंग से रंग दिया। लौटने पर परमपूज्य श्रीश्री महाराज जी ने वह रंगी हुई चादर अपने श्रीअंग से उतारकर पूज्य श्री मनोहर जी को दे दी, जिसे पूज्य श्री मनोहर बाबा ने पूज्या श्रीदेवी को वह चादर प्रणाम करने के लिये दे दी। जिसे ओढ़कर पूज्य श्रीदेवी अपने बिस्तर पर लेट गईं और प्रिया प्रियतम की दिव्य होली लीला में कई घंटों निमग्न रही और जीवन के अंतिम क्षणों तक उसी भाव में भावित रहीं एवं सदैव प्रिया प्रियतम की लीलाओं में अपने आपको समर्पित करती रहीं। ऐसी परम लीला अनुरागिनी पूज्या श्रीदेवीजी के चरणकमलों में शत-शत प्रणाम।

मैं गुरु पूर्णिमा उत्सवों में प्रतिवर्ष वृन्दावन आता रहा, जो मेरा परम सौभाग्य रहा एवं श्रीधाम वृन्दावन वास करने तथा परम पूज्यपाद श्रीश्री महाराज जी की सेवा करने का भाव जाग्रत हुआ। मेरे श्रीधाम वेणु विनोद कुञ्ज आने एवं वृन्दावन वास करने की भावना देखकर एक दिन परमपूज्य श्रीश्री महाराज जी ने उनके समक्ष बैठे हुए परिकरवृन्द से डपटकर पूछा उस समय पूज्या श्रीदेवीजी, पूज्य श्री मनोहर जी, पूज्य श्री ठाकुरजी, पूज्या कुसुम जी एवं पूज्या मनोरमा जी उपस्थित थे, तो उन्होंने पूछा "इसे किसने बुलाया?" पूज्या श्रीदेवीजी ने कहा महाराज जी, आपके प्रति इनकी बड़ी श्रद्धा व निष्ठा है और सदैव पद गायन-कीर्तन में इनकी रुचि रहती है साथ ही तमाल कुञ्ज के निर्माण का कार्य चल रहा है जिसमें श्री ठाकुरजी के साथ में एक पढ़े लिखे, व्यवहार कुशल व्यक्ति की

आवश्यकता है तो मैंने इन्हें बुलाया है। परमपूज्य श्रीश्री महाराज जी ने पुनः उन्हें आवेश युक्त स्वरों में कहा-देवीजी यह कोई भजन वजन करने वाला व्यक्ति नहीं है, इसे तुम्हीं सम्हालना और पूज्या श्रीदेवीजी ने इस बात को परमपूज्य श्रीश्री महाराज जी का निर्णय समझ लिया।

मेरे जीवन में परमपूज्या श्रीश्री देवीजी ने कुछ कृपा का अवदान किया उसे मैं निम्नानुसार सादर समर्पित कर रहा हूँ :-

श्रीधाम वृन्दावन वास करने में परमपूज्या देवीजी का अनुग्रह

सन् 1990 के आसपास की बात है मैं पहली बार गृह त्यागकर श्रीधाम आया। उसके पूर्व मैं परमपूज्य श्रीश्री महाराज जी के जन्म उत्सवों में सन् 1979 से एवं परमपूज्या देवीजी की कृपा से 29 साल से श्रीधाम वृन्दावन वास कर रहा हूँ।

परमपूज्य पंडित गयाप्रसाद जी महाराज द्वारा कृपा आशीर्वाद प्रदान करना

एक समय परमपूज्या देवीजी, पूज्या मनोरमा जी के साथ मैं परमपूज्य पंडित जी के जन्मदिवसर पर इन्हें प्रणाम करने श्री गिरिराज गोवर्धन गये थे। पूज्या देवीजी को पंडित जी अपनी बहन मानते थे, सो सारे नियमों को ताक में रखते हुए पूज्या देवीजी, पूज्या मनोरमा जी व मैंने पंडित जी के चरणों में प्रणाम किया। पंडित जी गद्‌गद् होते रहे। उसी दौरान एक घटना घट गई, पूज्या मनोरमा जी ने भी पंडितजी को चरण छूकर प्रणाम किया, पंडित जी अचानक अचकचा गये महिला स्पर्श पाकर पूछ "जे कौन है भईया?" पूज्या देवीजी ने बड़े संकोच से कहा यह मेरी छोटी बहन है। तत्पश्चात मेरे प्रणाम करने पर पूज्य पंडितजी ने सुखी भव का आशीर्वाद दिया व पूज्या देवीजी से पूछा "जे कौन है भईया?" पूज्या देवीजी ने बड़े प्रेम से परिचय दिया, पंडितजी ये परमपूज्य श्रीश्री महाराज जी के चरणों में रहकर वृन्दावन वास करना चाहता है। पंडितजी ने कहा "परम सौभाग्य, परम सौभाग्य।" पूज्य श्रीश्री महाराज जी के चरणों में रहकर वृन्दावन वास को का कहनो।

परमपूज्या देवीजी द्वारा वेष प्रदान

मेरा अत्यन्त सौभाग्य है ऐसी सिद्ध संत के द्वारा मुझे वेश प्राप्त हुआ। सन् 2010 की बात है। पूज्या देवीजी व पूज्या कुसुम जी के बीच में मंत्रणा हुई कि अपने कुञ्ज में कोई वेष प्राप्त व्यक्ति नहीं है अतः किसी व्यक्ति को वेष प्रदान किया जावे। विचार

विनिमय के बाद मेरा नाम प्रस्तावित किया गया। पूज्य आचार्य पीठाधिपति स्वामी किशोरीरमणाचार्य जी के आचार्यत्व में मुझे वेष प्रदान करने का कार्य परमपूज्य श्रीश्री महाराज के सन्मुख उनके कक्ष में सम्पन्न हुआ। परमपूज्या देवीजी द्वारा वेष प्रदान करने के पश्चात श्री किशोरीरमणाचार्य जी ने पूज्या देवीजी से निवेदन किया कि वे शिष्य के सिर पर अपना वरदहस्त रखने की कृपा करें। पूज्या देवीजी ने अति संकोच से अपने दोनों करकमल मेरे मस्तक पर पधराये। यहाँ विशेष बात कहने की ये है कि ज्यों ही पूज्या देवीजी ने अपने दोनों करकमल मेरे सिर पर रखे तो मेरे सम्पूर्ण शरीर में विशेष आनंद की लहर दौड़ गई, मेरे शरीर का भान लुप्त हो गया और एक प्रेममय, प्रकाश पूर्ण, दिव्य शरीर का प्रागट्य हो गया और उसमें मैं डूबता लहराता रह गया।

अखण्ड चौरासी कोस के अन्तर्गत श्रीधाम वास का आशीर्वाद

परमपूज्य श्रीश्री महाराज जी द्वारा पूज्य श्री चैतन्य महाप्रभु के 500 वर्ष पूर्ण होने पर 501 दिन के संकीर्तन का प्रस्ताव बड़वानी वाले भक्तों के समक्ष रखा गया था, उस संकल्प को पूज्य श्री मनोहर बाबा ने वर्ष 2004 से वर्ष 2005 में पूर्ण करने का बड़वानी वालों से आग्रह किया तदनुसार 17-07-2004 से 05-01-2006 तक बड़वानी में संकीर्तन संकल्पित किया गया। जिसमें पूज्य श्री मनोहर जी के साथ संकीर्तन आरंभ कराकर 1 माह पश्चात हम दोनों श्रीधाम वृन्दावन आ गये।

मेरी स्मृति के अनुसार पूज्य श्री मनोहर जी ने रु. 17,000/- पूज्या श्री श्रीदेवी के सन्मुख भेंट के रखे। पूज्या देवीजी ने उन पैसों को हटाते हुए कहा, इस सबसे क्या? यहाँ पर एक भी व्यक्ति कुञ्ज के कार्यों के लिये उपस्थित नहीं रहता तमाल कुञ्ज में हरि व वेणु विनोद कुञ्ज में राजेश बाकी सब साधिकाएं रहती हैं। दुनिया भर के कार्य जैसे नगर पालिका, बिजली बिल, राशन कार्ड आदि का तथा अन्य कार्य करने वाला यहाँ कोई नहीं है, तो आज यह निश्चित किया जावे कि यहाँ कौन रहेगा? श्री आनंद, वृन्दावनदास अपने-अपने कार्यों में तथा स्वास्थ के भाव से श्रीधाम वृन्दावन अखंडवास से मना कर गये, मुझ से पूछे जाने पर मैंने कहा मैं तो अपने आपको परमपूज्य श्रीश्री महाराज जी को समर्पित कर चुका हूँ अतः आप लोग जैसा मुझे आदेश करेंगे मैं उसका पालन करूँगा। इस पर पूज्या मनोरमा जी ने श्रीठाकुर वेणु विनोद बिहारीजी के ऊपर वराये हुए जल के पात्र को मेरे हाथ में दिया व पूज्य श्री श्रीदेवी की आज्ञानुसार मैंने कहा कि आज से मैं 84 कोस ब्रजधाम सीमा के बाहर कदम नहीं रखूँगा, सब लोगों ने करतल ध्वनि से इस बात का स्वागत किया।

अन्तिम अनुभूति

परमपूज्य श्री श्रीदेवीजी के पधारने के एक माह पूर्व वे अपने कक्ष में ही प्रसाद इत्यादि प्राप्त करती थीं, सब लोगों के प्रसाद पाने के पश्चात सुश्री सुषमा, सुश्री श्वेता एवं सुश्री शांति प्रसाद पाने बैठती उस समय मैं पूज्या श्री श्रीदेवीजी के सन्मुख उनके कक्ष में मुडिया लेकर बैठ जाता। मेरा मुख पूज्या श्री श्रीदेवीजी की ओर होता वे अपने भाव राज्य में चली जाती, मैं भी उनके सन्मुख आँखें बंद कर उस भाव राज्य में प्रवेश करने की कोशिश करता, ऐसा करीब 15 दिन तक हुआ। उन दिनों मुझे पूज्या श्री श्रीदेवीजी की कृपा से अपने स्वरूप की अनुभूति होती। एक दिन पूज्या श्री श्रीदेवीजी ने अपने सम्पूर्ण भाव राज्य की अनुभूति से मुझे अप्लावित किया, एक अलौकिक भावानुभूति से आप्लावित किया। मैंने देखा दिव्य प्रकाशमय वातावरण में श्री प्रियाप्रियतम गलबहियाँ डाले खड़े हुए हैं। श्रीश्री श्रीजी की ओर परमपूज्य श्रीश्री महाराज जी, उनके पीछे पूज्य श्री ठाकुरजी, उनके पीछे पूज्य श्री मनोहर जी व उनके पीछे मैं खड़ा हूँ तथा श्री ठाकुरजी की ओर पूज्या श्रीदेवीजी उनके पीछे पूज्या श्री कुसुमजी व उनके पीछे पूज्या श्री मनोरमा जी खड़ी हुई हैं। परमपूज्य श्रीश्री महाराज जी ताली बजाकर प्रियाप्रियतम जी की आरती कर रहे व सामवेत स्वरों में हम सब भी आरती कर रहे हैं। ऐसे दिव्य वातावरण में हम सब लोक अभिभूत हुए, आनंद अतिरेख से प्रियाप्रियतम को देखते हुए रसमय अनुभूति कर रहे थे।

ऐसी परमपूज्या, भगवत प्राप्त (सखी स्वरूप प्राप्त) श्री श्रीदेवीजी के चरण कमलों में बारम्बार नमन कर अपने आपको न्यौछावर करता हूँ।

उपरोक्त लेखन में कुछ त्रुटियाँ हो गई हों या मैं ज्यादा लिख गया हूँ तो आप सब क्षमा करेंगे व आशीर्वाद प्रदान करेंगे कि जो वस्तु पूज्या श्री श्रीदेवीजी ने मुझे कृपा कर दी है उसे मैं अपने हृदय में संजोये रखूँ।

परमपूज्य श्रीश्री महाराज जी के परिकवृन्द के चरणकमलों में बारम्बार प्रणाम।

यह रूप ही ऐसा है कि मन को लगाना नहीं पड़ता, श्रवणों को लगाना ही नहीं पड़ता। स्वयं मन सर्वेन्द्रियों सहित लग जाता है।

-पूज्य श्री महाराज जी

।। श्रीमन्नित्यनिकुंजविहारिणे नमः।।

।। श्रीस्वामी हरिदासो विजयतेतराम्।।

श्रीगुरुचरणाश्रित भजन का मूर्तिमान स्वरूप पूज्या 'देवी' जी

-बाबा श्री किशोरी शरण जी

श्रीहरिदास। रसिक अनन्य नृपति स्वामी श्रीहरिदास जी महाराज, सद्गुरुदेव श्री बाबाजी (बाबा श्री अलबेली शरण जी), प.पू. श्री महाराज जी के चरणों में प्रणाम करते हुए एवं समस्त रसिकाचार्यों को सादर वंदन करते हुए श्री महाराज जी की चरणाश्रिता श्री देवीजी के चरणों में शब्द-भेंट अर्पित करने का एक छोटा-सा प्रयास किया जा रहा है।

भक्तवत्सल, शरणागतवत्सल, दयासिंधु, करुणाकर प्रभु युगल सरकार श्री श्यामाश्याम की भक्ति से ही जीव का कल्याण संभव है, उसमें भी परम-कल्याण उसी का होता है जो श्रीहरिप्रिया के किसी दास का, भक्त का, संत का आश्रय तन-मन-प्राण से अपने हृदय में धारण कर लेता है और प्रभु कृपा से उसी के अनुरूप आचरण भी करता है। श्रीस्वामी पीताम्बरदेव जू कहते हैं-

श्रीगुरुदेव रसिक सिरमौर।
मंगल मूरति हिय सुख पूरत दूरि करत सब बाधा और।।
काम क्रोध मद लोभ मोह दुख सरनाये कछु चलत न जोर।
उलटि लजात संत पग परसत निसि भई भोर।।
जोग जज्ञ साधन वृत तीरथ जप तप कष्ट करावै।
इन सगरैन की फल की मूरति श्रीगुरु कृपा मनावै।।
आगम निगम पुरान तंत्र करि ब्रह्मा सिव हरि गावै।
श्रीगुरु पर पीताम्बर कोहै नेति नेति श्रुति ढोल बजावै।।

पूज्य श्री बालकृष्ण दास जी महाराज जी के प्रति श्रीदेवीजी के हृदय में कुछ ऐसे ही भाव थे। श्रीदेवीजी का सम्पूर्ण जीवन गुरुदेव की सेवा से ही भरा हुआ था। श्री महाराज जी के कौतुकी वचनों तक का भी पालन करने मानो देवीजी के जीवन का मूल मंत्र और नियम ही था कि जो श्री महाराज जी के श्रीमुख से निकला मानो देवीजी के लिए उनकी साधना उस वचन का पालन करना ही था। उनके जीवन काल गुरुनिष्ठा से भरे अनेकानेक प्रसंग हैं जिनमें से एक स्मरण में आया, जब देवी जी को 104 डिग्री बुखार था,

और श्री महाराज जी ने एक बालक की भाँति देवी जी से खिचड़ी खाने की इच्छा प्रकट की। ऐसी अवस्था, जिसमें साधारण अवस्था का मनुष्य शरीर से उठ भी नहीं सकता, में भी देवी जी ने पूर्ण शौचाचार के साथ रसोई बनाई और ज्यों ही श्री महाराज जी ने एक ग्रास खिचड़ी खाई, मानो जन्म-जन्मांतरों की बात (ऐसी निष्ठा से रीझकर) बना दी। तत्क्षण देवी जी का बुखार तो चला ही गया, साथ ही उनको जो स्वरूपानुभूति के साथ लीला-दर्शन हुआ उसे कह पाना सामर्थ्य में नहीं।

श्री गुरु-निष्ठा की पराकाष्ठा के साथ-साथ देवीजी साधन भजन में भी उसी अनुपात में थी, 12 घंटे एकासन भजन करना, श्री मनोहरदास बाबा से भजन की मानो सकारात्मक होड़ करना-कुछ ऐसे ही उदाहरण हैं उनकी भजन-निष्ठा के।

श्री देवी जी का सहज स्नेह और आत्मीयता का भाव गुरुदेव (बाबा श्री अलबेली शरण जी) के प्रति सदा ही रहा, यही कारण था कि देवीजी को स्वामी श्रीहरिदास जी महाराज की परम्परा का समाज-गायन अत्यंत प्रिय था। जिस समय समाज के ग्रंथों को स्त्री शरीर द्वारा स्पर्श न किए जाने का नियम था, ऐसे समय में भी समाज-गायन में आसक्ति के कारण देवीजी 4-4, 6-6 पृष्ठ बड़े रसिकाचार्यों के पद याद करके जातीं और फिर समाज में सबके साथ गातीं, ऐसी निष्ठा ही साधकों के लिए उदाहरण बनती है और आज भी बन ही रही है। श्रीनिधिवन राज में स्वामी श्रीहरिदास जी महाराज का दर्शन, संग में गुरुदेव श्री स्वामी बिहारिणदेव जी महाराज का दर्शन; श्रीकेलिमाल जी के 85 वें पद (कुंज कुंज डोलनि मृदु बोलनि) की लीला का दर्शन; श्री कुंवर किशोर ठाकुरजी का आलिंगन, रसिक त्रिवेणी (श्री रसिक बिहारी कुंज) में श्री गोवर्धनदेव जू महाराज का दर्शन और उनके हस्तकमलों में प्रसाद का प्राप्त होना आदि आदि अनेक विचित्र-विचित्र दिव्यानुभूतियों से भरा हुआ उनका जीवन आज साधक समाज के लिए प्रेरणा का खंभ है, कि श्रीप्रियालाल, आचार्य जन, रसिकाचार्य-चरण, दिव्य लीला आज भी प्रकट हैं लेकिन कोई देवी जी जैसा इच्छुक, संयमी, साधनातुर, धैर्यवान, पात्र तो हो जिसमें ये टिक सके। श्रीस्वामी ललितकिशोरी देव जी महाराज की यह साखी देवी जी के जीवन में पूर्ण चरितार्थ थी :-

श्रीस्वामी के जे भये, तिनकी यही सुरीति।
नित्यकेलि हिय में धरै, सब जीवनि सौं प्रीति।।

इस दास को देवी जी का प्रथम दर्शन श्री महाराज जी के जन्म शताब्दी महोत्सव (2018) में हुआ। श्री बाबाजी का दासत्व प्राप्त होने के कारण उनका सहज स्नेह और

करुणा भरा दर्शन सदा प्राप्त होता रहा। पर दु:ख कातरता का गुण देवी जी में उनके शरीर को अंतिम अवस्था में भी देखने को मिला, जब स्वयं इतनी गंभीरतापूर्वक बीमार होने पर भी हर बार बाबाजी से पूछतीं कि "आप स्वस्थ हैं न।" देवी जी जैसी तो देवी जी ही हो सकती हैं।

देवी जी का दर्शन-मात्र ही किसी स्नान से कम नहीं था, जैसे स्नान शरीर को साफ करता है, वैसे ही देवी जी के करुणापूर्ण नेत्रों का दर्शन, उनके युगल चरणों का दर्शन मात्र ही मन की मलिनता को धोने लगता था, मानो नेत्रों से बहती करुणा ने सब मलिनता को धोना शुरू कर दिया है। जब कभी अकेले भी या साधकों के साथ वेणु विनोद कुंज जाने का सौभाग्य मिलता तो आंगन में सर्वप्रथम देवी जी का श्रेयस्कर दर्शन मिलता, वे पूछतीं "कहाँ से आए" और उनके मुख की प्रसन्नता दर्शनीय हो जाती जब कानों में अक्षर पड़ता कि "श्री गोरीलाल कुंज में श्रीबाबाजी के यहाँ से आए।" महापुरुषों का मुस्कुरा देना मात्र ही अमंगल-पुंज को ध्वस्त कर भजन के लिए बल प्रदान करता है।

भले ही श्री देवी जी प्रकट रूप में हमें दर्शनीय नहीं हो रही हैं, परंतु उनके जीवन की समस्त अनुभूतियों के आधार पर ये कहना कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी कि 'वे सदा हमारे साथ हैं, समय-समय पर उनका दर्शन हमें अवश्य होता भी रहेगा।'

श्री महाराज जी के वेणु विनोद कुंज में प्रकाशित होने से आज लाखों भक्त भक्ति-पथ पर चल रहे हैं, हम साधक-सेवक-दास जन अक्सर वेणु विनोद कुंज को "सिद्धों की फैक्ट्री" कहा करते हैं, जिसके संचालक श्री महाराज जी हैं, उन्हीं की कृपा से आज हम उन सिद्धों, रसिकों का सानिध्य, दर्शन प्राप्त कर पाए, कर रहे हैं जिनके लिए नारद जी ने "दुर्लभ" शब्द प्रयोग किया है। ऐसी परम पूज्या श्री देवी जी के युगल चरणों में, श्री महाराज जी के श्री चरणों में, श्री गुरुदेव भगवान एवं सभी संत रसिकाचार्यों के चरणों में अनंत-अनंत बार दण्डवत प्रणाम करते हुए यह दास यही बात प्रेषित करता है कि आप सदा श्रीप्रियालाल की सेवा में पगे रहें और आपके चरणों के आश्रय में रहकर भजन का प्रयास मात्र करने के लिए लगे हुए हम साधक जन उस सुख का तिल मात्र अनुभव कर सकें, ऐसी कृपा की वांछा है, यही प्रार्थना है।



एक विशाल वट वृक्ष थीं श्रीदेवी जी

-डॉ. गोपाल चतुर्वेदी
वरिष्ठ आध्यात्मिक पत्रकार, वृन्दावन

वात्सल्य मूर्ति, परमपूज्या श्री रमादेवी जी के सम्पर्क में मैं सन् 1984 में आया था, जबकि मैंने सर्वप्रथम परम श्रद्धेय श्री बालकृष्ण दास जी महाराज के दर्शन किए थे। श्री देवीजी से हुई प्रथम भेंट के बाद से ही मैं उनका कृपा-पात्र बन गया। मैं उन दिनों स्थायी रूप से वृंदावन में नहीं रहता था। अतः मैं जब कभी भी वृंदावन आता तो उनके दर्शन करने और उनका आशीर्वाद प्राप्त करने हेतु उनके पास अवश्य जाता था।

मैं एक बार उनके आग्रह पर अपनी शारीरिक अस्वस्थता के चलते 'तमाल कुंज' में ठहरा था। उन दिनों श्री देवीजी मेरे भोजनादि का विशेष ध्यान रखती थीं। मेरे लिए जब भी भोजन की थाली लगती थी तो वे उसका स्वयं निरीक्षण करती थीं। वह यह देखती थीं कि उसमें कहीं कोई ऐसी चीज तो नहीं है जो मेरे स्वास्थ्य के प्रतिकूल हो। श्री देवीजी द्वारा दर्शित उस भोजन-प्रसादी में मुझे जिस सुख व आनन्द की अनुभूति होती थी वह षट्रस व्यंजनों में भी दुर्लभ है।

कालान्तर में जब मैं स्थायी रूप से वृंदावन में रहने लगा तो मुझ पर उनकी कृपा पूर्व से भी अधिक बरसने लगी। मेरी पत्नी (वसुधा चतुर्वेदी) जिस दिन अकेली 'वेणु विनोद कुंज' जाएँ और मैं न जाऊँ तो वे मेरी कुशलक्षेम अवश्य ही पूछती थीं। साथ ही वह सायंकालीन आरती के बाद बंटने वाले प्रसाद का दौना स्वयं लगवा कर उन्हें मेरे लिए देती थीं। इतनी निस्वार्थ स्नेह सिक्तता व कृपालुता आज के समय में अत्यन्त दुर्लभ है।

मेरी एक टांग में विकलांगता है। इसलिए मैं जब भी 'वेणु विनोद कुँज' जाऊँ तो वे मुझ पर निरन्तर यह नजर रखती थीं कि मेरे हाथ में छड़ी है या नहीं। चूंकि मेरी छड़ी सड़क, गली-शैयों आदि सब जगह इस्तेमाल होती है इसलिए मैं उसे उनके यहाँ जाने पर स्वच्छता व संकोचवश एक कोने में टिका देता था। इस पर देवीजी अत्यन्त नाराज हो जाती थीं। कहती थीं कि आपकी टांग में चोट है। आप इसे सदैव अपने साथ रखा करें। उनके इस स्नेह पर मैं बरबस निरुत्तर हो जाता था।

एक बार जब मैं देवीजी के पास गया तो उन्होंने मुझसे यह पूछा कि 'आप कहाँ से आ रहे हैं?' मैं उन्हें कुछ उत्तर देता उससे पूर्व ही मेरी पत्नी (वसुधा) ने कहा कि 'देवीजी, हम लोग बिहारीजी के दर्शन करके आ रहे हैं।' शायद उस दिन कोई विशेष पर्व-त्यौहार था। देवीजी, इतना सुनते ही वसुधा पर नाराज हो गईं। बोलीं, 'वसुधा, तुम

अकेली चली जातीं। चतुर्वेदी जी को क्यों ले गईं। आज कितनी भीड़ है और इनकी टांग में चोट है।' उन्हें इतना अधिक ख्याल था इस अकिंचन का।

एक बार जब वेणु विनोद कुंज की ऊपरी मंजिल पर रह रहे श्रद्धेय मनोहर बाबा अत्यन्त बीमार थे तो मैं उनके दर्शन करने जीने की सीढ़ियाँ चढ़कर उनके पास चला गया। क्योंकि वे उन दिनों स्वयं नीचे नहीं आते थे। मेरे साथ वसुधा भी थीं। देवीजी को जब इसका पता चला तो वे वसुधा से बहुत नाराज हुईं। बोलीं, 'तुम चतुर्वेदी जी को ऊपर चढ़ाकर क्यों ले गईं? बाबा जब नीचे आते तब उनके दर्शन हो जाते?' यह सब याद कर मेरे नेत्र आज भी डबडबा जाते हैं।

परम पूज्या देवीजी प्रचार-प्रसार की दुनियाँ से कोसों दूर अत्यन्त गुप्त व भजनानन्दी संत थीं। वह जब तक शारीरिक रूप से स्वस्थ रहीं तब तक उन्होंने 'निधिवन' की झाड़ियों में बैठकर प्रतिदिन 'महामंत्र' का तीन लाख जप किया। एक बार मैंने बतौर पत्रकार महाराजजी (श्री बालकृष्ण दास जी महाराज) के जन्मोत्सव के समाचार में देवीजी का भी नाम व चित्र दे दिया। तो वे मुझ पर अपने जीवन में सबसे ज्यादा नाराज हुईं। अपनी नाराजगी व्यक्त करने के लिएवे स्वयं अपनी लाठी के सहारे चलकर स्व. श्री कृष्णचन्द्र मिश्र के निवास तक गईं, जहाँ पर कि मैं ठहरा हुआ था। मुझे आज भी इस बात की ममन्त्रिक पीड़ा है कि मैंने अत्यन्त उत्साह में उन्हें यह कष्ट क्यों दिया।

कालान्तर में जब मैं स्थायी रूप से वृंदान में रहने लगा तो उन्हें बेहद प्रसन्नता हुई। एक बार जब मुझे परमपूज्य श्री बालकृष्ण दास जी महाराज के जन्मोत्सव के आयोजन का निमन्त्रण नहीं मिला तो मैं अपनी स्वाभिमानी प्रवृत्ति के चलते उसमें भोजन करने नहीं गया। केवल माल्यार्पण करके 'वेणु विनोद कुंज' से बाहर आकर घर के लिए चल दिया। तभी किसी ने इसकी सूचना देवीजी को दे दी। वे तत्काल अपनी लाठी के सहारे चलकर वेणु विनोद कुंज से बाहर आईं और मुझे अत्यन्त स्नेह से समझाते हुए यह बोलीं हम लोग संत हैं और यह आश्रम है। आपको हमसे गृहस्थों जैसी अपेक्षाएँ नहीं करनी चाहिए। आप तो हमारे परिकर के अभिन्न अंग हैं। आप हमारे यहाँ होने वाले प्रत्येक कार्यक्रम के लिए हमारी ओर से सदैव के लिए आमंत्रित हैं।' उनके यह कहते ही मेरे नेत्र अश्रुपूरित हो गए। बाद को वे मुझे स्वयं अंदर लेकर गईं और मुझे अपनी निगरानी में भोज-प्रसाद ग्रहण कराया। इतनी स्नेह सिक्तता अब कहाँ देखने को मिलती है। उन जैसी विभूतियाँ का तो अब युग ही समाप्त होता जा रहा है। वस्तुतः वह श्रीधाम वृंदावन के प्राचीन स्वरूप की परिचायक थीं। सहजता, सलता, उदारता, परोपकारिता, निस्वार्थता आदि सद्गुणों की वे प्रतिमूर्ति थीं। यदि हम लोग उनके किसी एक गुण को भी अपने जीवन में धारण कर लें तो

हमारा कल्याण हो सकता है। सादगी व त्याग की प्रतिमूर्ति श्रद्धेय देवीजी मुझ पर कारण रहित कृपालु थीं। मेरे लिए उनके मुख से सदैव आशीर्वाद के फूल झरते थे। यदि किसी कारणवश मैं उनके यहाँ होने वाले उत्सव में न जा पाऊँ तो देवीजी स्वयं अपने टिपिन में भोजन-प्रसाद लगवाकर मेरे लिए भिजवाती थीं।

सन् 2015 में मेरी मैनपुरी (उत्तर-प्रदेश) स्थित पैतृक सम्पत्ति कुछ भूमाफियाओं के दुष्कृत्यों के कारण विवादों के घेरे में आ गई। न केवल इस सम्पत्ति पर अपितु मेरी जान पर भी चौबीसों घण्टे खतरा मंडराने लगा। जब इस सबका देवीजी को पता चला तो देवीजी ने वसुधा से कहा, 'चतुर्वेदी जी, से कहना कि उनकी कुछ भी हानि नहीं होगी। बस महाराज जी (श्री बालकृष्ण दास जी महाराज) का स्मरण-चिन्तन करते रहें और महाराज जी का चित्र अपने पर्स में रखे। साथ ही अपने गले में उनका 'लॉकेट' पहने रहें।' देवीजी का यह कथन अक्षरशः सत्य निकला। शासन, प्रशासन व न्यायपालिका आदि से कोई भी राहत न मिलने के बावजूद भी हमारी जीत हुई। साथ ही हम अपनी उस पैतृक सम्पत्ति की रक्षा कर सके, जिसे हमारे पूर्वजों ने अपने खून-पसीने से सींचा था। देवीजी के आशीर्वाद से ही समाज में हमारा सिर ऊँचा रह सका।

सन् 1916 में मैं अपनी 'लीवर' की बीमारी के चलते गंभीर रूप से बीमार हो गया। दिल्ली के फोर्टिस व गुरुग्राम के मेदांता अस्पताल में मेरा कई महीनों तक इलाज चला। लाखों रुपये खर्च होने के बाद भी वहाँ के नामी-गिरामी डॉक्टरों को यह उम्मीद नहीं थी कि मैं जीवित रह पाऊँगा। परन्तु देवीजी ने नित्यप्रति मेरे शुभचिन्तकों से मेरी कुशल-क्षेम पूँछकर और उन्हें आवश्यक दिशा-निर्देश देकर अपने आशीर्वाद से मुझे बहुत शीघ्र स्वस्थ कर दिया। मैंने जब पूर्ण स्वस्थ होकर वृंदावन में उनके दर्शन किए तो वे मुझे देखकर फूली नहीं समाईं। सच तो यह है कि उन्हीं की कृपा से मुझे नवजीवन प्राप्त हुआ। अत: वे मेरा जीवन आधार थीं। मेरा जीवन धन थीं।

मैं बड़भागी हूँ जो मुझे उनके ही जीवन-काल में उनकी जन्म-भूमि शिकारपुर (बुलन्दशहर) में उनके उस घर के दर्शन का सौभाग्य भी प्राप्त हुआ, जो कि अब खण्डहर में तबील हो गया है। मुझे यह शुभ अवसर शिकारपुर में परमपूज्य श्री बालकृष्ण दास जी महाराज के 25 नवम्बर से 30 नवम्बर 2018 पर्यन्त सम्पन्न हुए जन्मशताब्दी महोत्सव के दौरान प्राप्त हुआ। देवीजी को मैंने जब यह सब बताया तो वे मुझ पर अत्यन्त प्रसन्न हुईं। आज भी जब मैं दु:ख, कष्ट, पीड़ा व अनिणय की स्थिति में उनके सम्मुख नतमस्तक होता हूँ तो मेरे बंद नेत्रों में उनकी मुस्कराती छवि मुझे आत्मबल व प्रेरणा प्रदान करती हैं। उनका सतत कर्मशील जीवन, प्रेम, स्नेह, अपनत्व व आत्मीयता से लबालब

भरा अन्त:करण, आदर्शवादी व्यक्तित्व, निष्कपट-उदार-सहज-सेवाभावी मन व आध्यात्मिक जीवन-मूल्य हमें एक अच्छा इन्सान बनने को प्रेरित करते हैं। बड़ा ही विशाल हृदय था उनका। वस्तुत: देवीजी, देवीजी ही थीं। उन जैसा कोई और हो ही नहीं सकता है। वह ऐसी विशाल वट वृक्ष थीं जिसके नीचे मुझ जैसे असंख्य व्यक्ति आश्रय पाते थे। वह वेणु विनोद कुंज की पर्याय थीं और सदैव ही रहेंगी। यद्यपि आज वह दैहिक रूप से हम लोगों के मध्य नहीं हैं परन्तु वह सूक्ष्म रूप में आज भी हम सभी के मध्य विद्यमान हैं। उनके परमाणु आज भी हम लोगों के निकट मौजूद हैं। सच तो यह है कि वह श्रीधाम वृंदावन छोड़कर कहीं और जा ही नहीं सकती हैं। मैं अपने अर्न्तमन की अतुल गराइयों से उनको शत-शत नमन करता हूँ। साथ ही श्री देवीजी के 'स्मृति-ग्रंथ' के प्रकाशन हेतु सम्मान्य श्री शिवकुमार गेयल जी को बहुत-बहुत धन्यवाद देता हूँ, जिनके अथक परिश्रम से यह पावन कार्य संपन्न हुआ है। क्योंकि इस ग्रंथ से असंख्य व्यक्तियों को प्रेरणा व ऊर्जा प्राप्त होगी।



परम पूज्य श्री महाराज जी की सेवा में रत श्रीदेवी जी।

कोटिशः नमन पूज्य श्रीदेवी जी

-श्री ब्रजेश शुक्ला
वरिष्ठ पत्रकार, लखनऊ

क्या याद करूं क्योंकि भूलने के लिए कुछ भी नहीं है। लगभग 40 साल की वे तमाम यादें जो एक जगह आकर सिमट जाती हैं कि देवी जी के चरणों में मैं दंडवत कर रहा हूं। वह प्रेम से पूछ रही हैं कहां से आया है कब आया ? लखनऊ से आया क्या सीधे। प्रमिला जी कैसी हैं ? यह शब्द ही मंदाकिनी की तरह पूरे शरीर को पवित्र कर जाते थे। एक विशेष प्रयोजन में बांके बिहारी जी का भोग लगवाना था। जो सज्जन मुझे ले गए थे उन्होंने बिहारी जी के गोस्वामी चुन्नीलाल गोसाई को बता दिया कि देवी जी ने भेजा है इन्हे। गोसाई जी का भाव ही बदल गया। बोले देवी जी साक्षात देवी हैं। यह तो आप लोगों का सौभाग्य है कि उनके दर्शन कर पा रहे हैं। उनकी बातों को मैं सुनता जा रहा था। उनकी आंखों से प्रेम झलक रहा था और मेरे अंदर यह भाव भी कि एक महान संत के दर्शन का मुझे सौभाग्य प्राप्त है। वैसे तो मेरी कोशिश यही रही कि देवी जी को दंडवत कुछ फासले से ही करूं। लेकिन कभी-कभी वह स्वयं ही चरण बढ़ा देती थी और वह क्षण जीवन की अमूल्य निधि बन गए।

जब बचपन में वृंदावन गया तो एक बात सुनी कि देवी जी अभी नहीं आई । आज काफी देर हो गई है। और देवी जी निधिवन में भजन में तल्लीन होती थी। जब शाम को जब बिहारी जी के दर्शन के लिए मंदिर से निकलता तो देवी जी के दर्शन का अवसर मिलता था।

जब भी कभी श्री धाम वृंदावन की ओर बढ़ा कुछ चीजें चलचित्र की तरह नाचती थी। श्री श्री महाराज जी का वह पावन कक्ष जिस पर कभी वह बिराजा करते थे और आज भी विराजते हैं। पहुंचते ही श्री महाराज जी के चरणों में दंडवत। फिर श्री ठाकुर जी की चरणों में दंडवत करता। मनोहर बाबा के चरणों में बारंबार प्रणाम और तमाम राजनीतिक समीकरणों पर उनके कुछ सवाल। फिर देवी जी के कक्ष की ओर आना होता था। देवी जी का एक छोटा सा कक्ष। इतनी जगह की बस दंडवत का ही स्थान बचता था। वृंदावन की याद करते हैं यह सारी बातें जेहन में घूमती रहती। श्रीदेवी जी के दंडवत के बाद जब सर उठाता तो एक सवाल हमेशा पूंछ देती थी कहां रुका है? भोजन किया कि नहीं किया? मंदिर में प्रसाद ले लेना। हर बार यह सोच कर जाता कि इस बार देवी जी के चरणों में विनम्रता से कह दूंगा कि आप के दर्शन ही मेरे लिए प्रसाद की तरह है। कभी

यह भी अच्छा नहीं लगा की एक महान संत के लिए मैं बोझ बनकर वहां पहुंच जाऊं। सेवा तो कर नहीं सकता और संत स्थली में सेवा करवाने का ध्रतकर्म । लेकिन यह ध्रतकर्म एक नहीं सौ बार किया। उनका आग्रह मेरे लिए हमेशा आदेश ही रहा । मेरे लिए ही क्यों, मंदिर परिसर में ऐसा कौन होगा जो उनकी एक शब्द को सुनने के लिए उनके सामने चुपचाप ना बैठा रहता हो। एक और लालच मंदिर में प्रसाद ग्रहण करता था तो उस समय देवी जी भी प्रसाद ग्रहण कर रही होती थी। संत का सानिध्य से बड़ा प्रसाद और क्या हो सकता है। कभी-कभी बड़ा ताज्जुब लगता है कि मंदिर में हजारों लोग आते हैं और एक एक व्यक्ति से उनका हाल पूछना उन्हें याद रखना। उनके दर्शन कर गोस्वामी तुलसी दास कि वह पंक्तियां बार-बार याद आती थी।

संत हृदय नवनीत समाना। कहा कबिन्ह परि कहै न जाना
निज परिताप द्रवइ नवनीता। पर दुख द्रवहिं संत सुपुनीता।।

संतों का हृदय मक्खन के समान होता है, ऐसा कवियों ने कहा है, परंतु उन्होंने ढ़असली बातत्रः कहना नहीं जाना, क्योंकि मक्खन तो अपने को ताप मिलने से पिघलता है और परम पवित्र संत दूसरों के दु:ख से पिघल जाते है। देवी जी को अपने कष्ट का कभी भान नहीं रहा लेकिन दूसरे की पीड़ा उन्हें हमेशा दुखी कर देती थी। इनकी यादें तो पहले ही थी और आज भी है। वह अस्वस्थ थी और इसकी सूचना भी मिलती रहती थी लेकिन लश्चकडाउन ने विवश कर दिया था। वृंदावन नहीं जा पाया यह भी संतों का ही आदेश था। एक दिन सूचना मिली देवी जी परम धाम की यात्रा पर चली गई है। मैं इसलिए लिख रहा हूं कि देवी जी अब प्रिया प्रियतम के लीला में विचरण कर रही हैं। लेकिन यह विचरण तो पहले भी था। आंख बंद करता हूं तो वही सब कुछ दिखता है कि मंदिर में प्रवेश कर रहा हूं। देवी जी अभी कक्ष में हैं। थोड़ी देर बाद वह निकली। सभी लोग दौड़े। वह अपने आसन पर विराजमान हुई। उस कुर्सी के नीचे एक चौपाया रख दिया गया जिसमें वह आसानी से अपने चरण रख सकें। फिर प्रणाम किया। सभी ने प्रणाम किया। यह साक्षात अनुभव होता रहे आपकी पा तो हमेशा बरसती रही है आगे भी बरसती रहेगी। पहले भी आप साक्षात थी और आज भी आप साक्षात ही हैं। लेकिन शायद यह सवाल अब सुनने को नहीं मिलेगा.. बृजेश तू कहां रुका है? जब मैं बताऊंगा तो कहेंगी कि अरे इतनी दूर! तमाल कुंज में क्यों नहीं रुक गया?





पूज्या श्री कृष्णा जी



पूज्या श्री रमा देवी जी

संक्षिप्त जीवन वृत्त

वंश परिचय

जन्म एवं बाल्यावस्था

गृहत्याग एवं तितिक्षापूर्ण साधना





पूज्य श्री महाराज जी के जन्म शताब्दी महोत्सव के अवसर पर टेबिल केलेण्डर
'रस-रसोर्मि' के 'श्री' चरणार्पण के अवसर पर श्रीदेवी जी एवं परिकर।

वंश परिचय

तीर्थि कुर्वन्ति तीर्थानि सुकर्मी कुर्वन्ति कर्माणि,
सच्छास्त्री कुर्वन्ति शास्त्राणि।।

वे जिस देश में रहते हैं वह देश पुण्य तीर्थ बन जाता है, वह जो उपदेश करते हैं पावन शास्त्र हो जाता है, वे जिन कर्मों को करते हैं वही कर्म सत्कर्म समझे जाते हैं।

(नारद भक्ति सूत्र 69)

उत्तर प्रदेश प्रान्त का जनपद बुलन्दशहर अपने आपमें एक ऐतिहासिक एवं पौराणिक जनपद है। महाभारत काल के कई ऐतिहासिक स्थल यहाँ दर्शनीय हैं इसके अतिरिक्त यह जनपद माँ भागीरथी की कृपा से भी सिंचित है जिसके कारण कई तीर्थस्थल माँ भागीरथी के किनारे अवस्थित हैं। उन्हीं में से एक तीर्थस्थल है अनूपशहर जो कि पतित पावनी गंगा के दक्षिण किनारे पर स्थित बुलन्दशहर जनपद मुख्यालय से 30 किमी. की दूरी पर है। यहाँ कई संस्कृत विद्यालय थे जिनके कारण इस स्थान को कुछ लोग 'मिनी काशी' के नाम से भी पुकारते थे। साहित्य की दृष्टि से अनूपशहर हिन्दी साहित्य के प्रसिद्ध कवि 'देव' की जन्मभूमि व कर्मभूमि रहा है।

अनूपशहर नगर से उत्तर की ओर गंगा पार करने पर बदायूँ जनपद की सीमा है जहाँ प्रातःस्मरणीय श्री हरि बाबाजी महाराज ने 'बाँध लीला' की थी। 'गवाँ' नामक स्थान पर पूज्य श्रीहरि बाबा का अत्यन्त रमणीक आश्रम व उनका स्मृति मन्दिर आज भी स्थित है जहाँ सतत् हरिनाम संकीर्तन होता है। इसी आश्रम में रहकर पूज्य श्री प्रभुदत्त जी ब्रह्मचारी महाराज ने प्रसिद्ध 'चैतन्य चरितावली' का लेखन किया था जिसका उल्लेख उन्होंने ग्रन्थ की भूमिका में किया है।

अनूपशहर से 10 किमी. पूर्व की ओर महाभारतकालीन प्रसिद्ध प्रमुख पात्र दानवीर कर्ण का स्थान कर्णवास है। कहा जाता है कि दानवीर कर्ण यहाँ गंगा स्नान उपरान्त दान किया करते थे। अनूपशहर व कर्णवास के मध्य 5 किमी. पर महर्षि भृगु की तपस्या स्थली भृगु आश्रम है जिसे आजकल भेरिया नाम से वहाँ स्थित ग्राम के कारण जाना जाता है। गंगा किनारे यह एक अति सुरम्य, शान्त वातावरण में, सांसारिक कोलाहल से दूर एक पवित्र परमाणु युक्त आश्रम है जो कि प्रसिद्ध सन्त प्रातःस्मरणीय श्री उड़िया बाबाजी महाराज की भजन स्थली भी रहा है और प्रमुख बात यह है कि इसी स्थान पर प्रातःस्मरणीय श्रीहरि बाबा जी महाराज व प्रातःस्मरणीय श्री उड़िया बाबाजी महाराज का प्रथम मिलन हुआ था।

पाठक सोच रहे होंगेकि पूज्या देवीजी के चरित्र में इस सब लेखन का क्या प्रयोजन है? पूज्य श्री देवीजी के चरित्र में 'अनूपशहर' व 'बाँध लीला' दोनों का ही महत्वपूर्ण स्थान है जिसका अवलोकन सुधी पाठकगण सन्दर्भ आने पर अवश्य करेंगे।

पूज्या देवीजी के गृहनगर शिकारपुर से अनूपशहर तीर्थस्थल की दूरी मात्र 30 किमी. है। उस समय पर बैलगाड़ी या पैदल ही यात्रा हुआ करती थी। बस के द्वारा पहले बुलन्दशहर फिर अनूपशहर जाना होता था। जो कि लगभग 60 किमी. की दूरी होती थी।

शिकारपुर नगर में सेठ झब्बालाल जी का सम्पन्न परिवार था। आपकी बीस-पच्चीस गाँव की जमींदारी थी तथा चल अचल सभी प्रकार की सम्पत्ति भरपूर थी एवं कई नौकर चाकर आदि थे। सेठ झब्बालाल जी के एकमात्र पुत्र थे सेठ नारायण प्रसाद जिनके तीन पुत्र थे श्री हरप्रसाद, श्री लक्ष्मीनारायण व श्री केशव प्रसाद। यह तीनों पुत्र मिलकर संयुक्त परिवार के रूप में प्रेम पूर्वक रहते थे। प्रत्येक के तीन चार बच्चे होने के कारण घर बच्चों के कोलाहल से हर समय गूंजता रहता था। पूरे परिवार में बड़ा ही प्रेमपूर्ण वातावरण रहता था व तीनों भाई मिलकर सारा कार्य सम्हालते थे। सबसे बड़े श्री हरप्रसाद जी खेतीबाड़ी, हल, बैल, परिवारीय आवश्यकताओं की पूर्ति आदि का कार्य सम्हालते थे तो श्री लक्ष्मीनारायण जी जमींदारी व किसानों आदि से सम्बन्धित व्यवस्थाओं की देखभाल किया करते थे। सबसे छोटे श्री केशव प्रसाद जी चूँकि वकालत की शिक्षा प्राप्त थे अत: सम्पत्ति के व जमींदारी के कानूनी कार्यों का उत्तरदायित्व सम्हालते थे। परिवार का वातावरण अत्यन्त उल्लास पूर्वक धार्मिक था। पूरा परिवार धार्मिक संस्कारों की विरासत से ओतप्रोत था।

शिकारपुर नगर में परिवार के पूर्वजों ने दो भव्य देवालयों का निर्माण कराया था जिसमें एक में ठाकुर श्री बलदेव जी महाराज विराजमान हैं व एक में भगवान श्री चन्द्रमौलि। इन दोनों देवालयों की सुन्दरता आज भी देखते ही बनती है। भगवान शिव के विशाल मन्दिर प्रांगण में ही जमींदारी सम्बन्धी क्रियाकलाप रथ, गाड़ी, पशुओं का रखरखाव व अन्य सामाजिक क्रियाकलाप सम्पन्न हुआ करते थे। बच्चे, परिवार व स्त्रियों के रहने के लिए निकट में ही विशाल हवेलीनुमा आवास था जिसे जनानखाना कहा जा सकता है।

सभी परिवारीजन की धार्मिक रूचि होने के कारण प्रांगण में स्थित शिवालय के गर्भगृह (गुफा) में प्राय: साधु-सन्त आते रहते थे। इसके गर्भगृह में एक बार प्रवास काल में प्रात:स्मरणीय श्री उड़िया बाबाजी महाराज व स्वामी सनातन देव जी (श्री उड़िया बाबा जी महाराज के शिष्य जिनका शिकारपुर से 15 किमी. स्थित खुरजा जन्मस्थान है) ने भी विश्राम किया था। शिवालय पर प्राय: धार्मिक आयोजन होते ही रहते थे। परिवार में सर्वत्र सुसंस्कारित उल्लासमय सम्पन्नता का धार्मिक वातावरण रहता था।

जन्म एवं बाल्यावस्था

सो कुल धन्यउमा सुनु, जगत पूज्य सुपुनीत।
श्री रघुवीर परायन जेहि, नर उपज विनीत।।

उक्त मानस चौपाई को चरितार्थ करते हुए गौ-सन्त-ब्राह्मण सेवी, भक्ति परायण सेठ झब्बालाल जी के मझले पौत्र सेठ श्री लक्ष्मीनारायण जी के परिवार में पूज्य श्री देवी जी का आगमन दिनांक 17 अक्टूबर 1927 रात्रि 01:30 बजे तदनुसार वि. सम्वत् 1984 कार्तिक कृष्ण षष्ठी, रविवार को हुआ। आपके जन्म के साथ ही परिवार में एक अत्यन्त आभामय प्रसन्नता व्याप्त हो गयी। श्री देवी जी के जन्म से पहले एक भाई व दो बहिनें अल्प शैशव अवस्था में ही कालकवलित हो गये थे। केवल एक बड़ी बहिन सुश्री चन्द्रप्रभा जीवित थीं। इस प्रकार श्री देवी जी अपने पिता की दूसरी संतान थीं। इसके बाद इनके तीन बहिनें व दो भाई सुश्री पुष्पलता, सुश्री कुसुम देवी, भाई विनोद कुमार, सुश्री शशिकला व भाई शिवकुमार और हुए। सुश्री कुसुम देवी जी ने पूज्य श्री महाराज जी के 1952 में शिकारपुर प्रवास काल में सम्पर्क में आने पर प्रभावित होकर व तत्पश्चात पिताजी सहित श्रीधाम गंगा मन्दिर आने पर श्री देवीजी के त्याग एवं रहनी से प्रेरित होकर श्री महाराज जी के चरणों में जीवन समर्पित कर दिया। इसी काल में आपकी पूज्य माताजी का भी शरीरान्त हो चुका था।

पूज्या देवी जी के जन्म से पहले की एक घटना विशेष उल्लेखनीय है जिसके अभाव में पूज्य देवीजी के व्यक्तित्व की आभा का दिग्दर्शन पूर्णरूपेण समझने में कठिनाई होगी। पाठक पूर्व में अवगत हो चुके हैं कि श्री लक्ष्मीनारायण जी के परिवार में प्रथम जन्में पुत्र एवं दो-तीन पुत्रियाँ अल्प शैशवकाल में ही दिवंगत हो चुके थे। परिवार में एकमात्र बालक इनकी बड़ी बहिन चन्द्रप्रभा (3 वर्ष की आयु) ही थीं। भारतीय परिवारों में स्वाभाविक रूप से पुत्र प्राप्ति की कामना बलवती रहती है। भारतीय संस्कृति व समाज का तानाबाना कुछ इस प्रकार का है कि प्रत्येक दम्पत्ति अपनी गोद में एक गुणवान, होनहार पुत्र को पाना चाहता है। श्री देवी जी के माता-पिता भी इस आकांक्षा से अछूते नहीं थे। वह चाहते थे उनके यहाँ एक अत्यन्त गुणवान पुत्र का जन्म हो अतः जैसे ही आदरणीय माताजी को गर्भवती होने का संकेत मिला उन्होंने पूज्य पिताजी को अवगत कराया। पूज्य पिताजी व माताजी ने किन्हीं धार्मिक विद्वान के निर्देशानुसार पुत्र प्राप्ति की कामना से पूर्ण विधि-विधान पूर्वक सद्गृहस्थ के रूप में अनुष्ठान किया।

इसी काल में पूज्य श्रीहरि बाबा जी की बाँधलीला अनूपशहर-गवाँ क्षेत्र में चल

रही थी। पूज्य श्रीहरि बाबा जी महाराज की यह 'बाँध लीला' ऐसी थी जिसके आगे तत्कालीन ब्रिटिश सुरकार व प्रशासन भी हतप्रभ थे। श्री बाबा ने स्पष्ट घोषणा कर रखी थी कि जो भी कोई व्यक्ति वह स्त्री हो या पुरुष, वृद्ध हो अथवा बाल, अमीर हो या गरीब, किसी भी जाति, वर्ण या धर्म का हो किसी भी लौकिक या पारमार्थिक कैसी भी कामना से 'बाँध भगवान' की सेवा किसी भी प्रकार करेगा अथवा यहाँ मात्र एक परातभी मिट्टी डालेगा 'बाँध भगवान' उसकी वह मनोकामना अवश्य पूरी करेंगे। लिखने की आवश्यकता नहीं है कि अपार जनसमूह प्रतिदिन 'बाँध भगवान' की सेवा कर अपने मनोवांछित फल प्राप्त करते हुए अपने को कृतकृत्य समझ रहा था। इसी जनसमूह में पूज्य श्री देवी जी के माताजी व पिताजी भी मिट्टी डालने में अपनी आहुति समर्पित किये। और समयानुसार श्री देवी जी ने मानव शरीर धारण कर परिवार को कृतार्थ किया। यद्यपि कामना पुत्र प्राप्ती की थी किन्तु श्री देवीजी के जन्म लेते ही एक अपूर्व प्रसन्नता व मानसिक आह्लाद पूर्ण शान्ति का अनुभव दम्पत्ति ने किया किसी ने कहा भी है-

जननी जनै तो भक्त जन या दानी या शूर
नाहिन ते बाँझहि भली, विरथ गवावें नूर।

आगामी लेखों में पाठक स्वयं अनुभव करेंगे कि सौ-सौ पुत्रों के पाने से भी अधिक श्री देवी जी जैसी पुत्री प्राप्त कर माता-पिता अत्यन्त प्रसन्न थे। पारिवारिक रीतिरिवाजानुसार आपका नामकरण संस्कार किया गया व आचार्य जी ने आपको 'विमला' नाम से सुशोभित किया।

उससमय पर बालिकाओं की शिक्षा पर अधिक ध्यान नहीं दिया जाता था। शिकारपुर में बालिका शिक्षा की विशेष अच्छी व्यवस्था भी न होने के कारण आपको शिक्षा प्राप्त करने हेतु आपकी 'बुआ' के पास अलीगढ़ भेजा गया जहाँ आपके फूफाजी सम्मानित वकील थे। वहाँ आपने प्राथमिक स्तर की शिक्षा प्राप्त की किन्तु कुछ परिस्थितिवश पुनः शिकारपुर आकर ही अपने कक्षा 8 (मिडिल) तक की शिक्षा प्राप्त की। अब तक आपकी आयु 15 वर्ष की हो चुकी थी। आप स्वभावतः गम्भीर रहती थीं। अत्यन्त रूपवान थीं हीं। धार्मिकताएवं सरलता आपका स्वाभाविक गुण था। किन्हीं भी साधु वेषधारी को देखकर आपके मन में उनके प्रति अत्यन्त आदर उमड़ पड़ता था क्योंकि आपके मन में धारणा थी कि साधु यानी जिन्हें ईश्वर प्राप्ती हो चुकी है। अतः किसी भी साधु के द्वार पर भिक्षा हेतु आने पर दौड़कर ये भिक्षा देने जातीं। कई बार सम्भ्रान्त परिवार की वयस्क पुत्री का इस प्रकार द्वार की ओर दौड़ना माँ के कर्त्तव्य बोध को जगा देता और माँ इन्हें ऐसा न करने का सख्त निर्देश देकर वर्जित करतीं। इनके मन में आता साधुओं के साथ घर छोड़कर चली जाऊँ व ईश्वर प्राप्ति कर जन्म सफल करूँ। एक बार आपने

अपनी यह भावना पूज्य माँ के सामने व्यक्त की। स्वाभाविकतया माँ ने पिताश्री को अवगत कराया जिसके उपरान्त माताजी व पिताजी ने बहुत समझाया व बाल सुलझ ताड़ना भी दी। आपको प्राय: रोना अकारण ही आ जाता था तथा ईश्वर दर्शन कैसे हो यही भावना दिन प्रतिदिन बलवती होती जा रही थी।

आपके अन्दर धार्मिक संस्कारों का उन्नयन का श्रेय आपके ताऊजी श्री हरप्रसाद जी को है। पाठक जैसा कि पहले पढ़ चुके हैं ताऊजी के जिम्मे खेती-बाड़ी, पशु, हल-बैल की व्यवस्था का भार था तो वह जब घर पर रात्रि को भोजन हेतु आते तो सारे बच्चे गोल घेरा बनाकर उनके पास बैठ जाते व ताऊजी उनको धार्मिक भागवत, रामायण आदि की धार्मिक कहानियाँ सुनाया करते। पूज्य देवी जी के साथ उनकी समवयस्क बहिन 'प्रेम'-जो श्री महाराज जी के चरणाश्रित होने पर 'कृष्णा' जी के नाम से साधनारत रहीं व जिन्होंने श्री देवी जी के साथ ही गृह त्याग किया इन्हीं श्री हरप्रसाद की इकलौती पुत्री थीं। श्री हरप्रसाद के चार पुत्र श्री दुर्गाप्रसाद, श्री ओंकार प्रसाद, श्री लोकेश प्रसाद व श्री रमेश प्रसाद थे। श्री कृष्णा जी (प्रेम) इनमें तीसरे नम्बर की सन्तान थीं। श्री देवी जी के आदरणीय चाचाजी जिन्होंने श्री देवी जी के गृह त्याग के समय महत्वपूर्ण भूमिका निभाई व श्री देवी जी व श्री कृष्णा जी को गृह त्याग के पश्चात अनेक तीर्थों का भ्रमण कराया, एक धार्मिक आस्थावान पेशे से वकील थे के यहाँ भी तीन पुत्रियाँ सुश्री ब्रह्मा देवी, सुश्री कमला देवी, सुश्री निर्मला देवी व एकमात्र पुत्र श्री सुरेश प्रसाद सहित भरापूरा सम्पन्न परिवार था। आदरणीय चाचाजी की महत्वपूर्ण भूमिका का अवलोकन पाठकगण आगामी गृहत्याग अध्याय में करेंगे।

जिहिं कुल साधु भागवत होई।

गनिय न वर्ण अवर्ण तासु कौ आप तरै तारै कुलदोई।।



प. पू. श्री महाराज जी के साथ श्रीदेवी जी, श्री कुसुम देवी जी एवं पूज्य पिता जी

गृह त्याग एवं तितिक्षापूर्ण साधना

निरखन को अकुलात श्याम तव मूर्ति वारिज नैंन।
छिन पै छिन बिन युग सम बीतत, वरण श्याम सुख दैंन।।
मंजुल मधुर मनोहर मुखश्री, कर्णमूल सुन बैन।।
अखियाँ तरस रही दरशन को, पल पल करवट रैन।
मदन वदन लख चन्द्र शरद पुनि 'अलि' बलैया लैंन।।

श्रीकृष्ण मिलन-दर्शन की लालसा श्री देवीजी में दिन प्रतिदिन तीव्र होती जा रही थी। वे जिस किसी साधु वेषधारी को देखती तो मन में विचार आता कि इनके साथ चली जाऊँ और भगवद् दर्शन कर जन्म सफल करूँ क्योंकि उनकी यह धारणा थी कि 'साधु' माने जिनको भगवद् प्राप्ति हो चुकी है और जो स्वयं भगवद् स्वरूप होते हैं। किन्तु फिर कुल मर्यादा, सामाजिक बन्धन और बालिका होने का अहसास भी उन्हें सताने लगता।

इन्हीं दिनों शिकारपुर नगर के चारों ओर खुरजा, बुलन्दशहर, अनूपशहर, गवाँ, कर्णवास, डिवाई में प्रात: स्मरणीय श्री उड़िया बाबाजी महाराज व पूज्य श्री हरि बाबाजी महाराज के सान्निध्य में सर्वत्र भक्ति रस सलिला प्रवाहित हो रही थी। गवाँ में पूज्य श्री हरि बाबाजी महाराज "बाँध लीला" कर ही चुके थे। इसी सन्त मण्डल में एक सन्यासी सन्त प्रवर थे पूज्य श्री भगवान स्वामीजी। इनके सान्निध्य में शिकारपुर में श्री देवीजी के परिवार द्वारा चैत्र नवरात्रि सन् 1944 में नौ दिन तक नवाह पारायण उत्सव का आयोजन किया गया। यह उत्सव इतना भव्य था कि शिकारपुर नगर का समस्त भक्तजन सैलाब उमड़ पड़ा जिसकी भक्ति भावना व श्रद्धा को देखकर पूज्य श्री भगवान स्वामीजी भी गद्‌गद थे। उत्सव में श्री रामायण पाठ व सत्संग हुआ करते थे जिसमें धर्म लाभ लेने के लिए परिवार की स्त्रियाँ भी परिवार के ही शिव मन्दिर (उत्सव स्थल) जाया करती थीं। श्री देवीजी का प्रथम सन्त सत्संग यहीं श्री भगवान स्वामीजी के साथ शिवालय के नीचे की गुफा (गर्भगृह) में हुआ। श्री स्वामीजी ने सामान्यतया स्त्रीयोचित सत्संग प्रारम्भ किया कि 5 मिनट के पश्चात ही श्री देवीजी ने उनसे निवेदन किया कि "मुझे तो श्रीकृष्ण के बारे में कुछ बताइये" और श्री देवीजी ने उनसे अपनी गृहत्याग की इच्छा भी व्यक्त कर दी। श्री स्वामीजी एकदम गम्भीर हो गये और तत्कालीन सामाजिक परिवेश, पारिवारिक पृष्ठभूमि, अवस्था व नारीत्व के बारे में विस्तार से समझाते हुए गृहत्याग के लिए स्पष्टतया निषेध किया और घर पर रहकर ही भजन करने की सम्मति व्यक्त की। किन्तु

श्री देवीजी का मन उनकी सम्मति से सहमत नहीं हुआ और उनके मन में अनिर्णय की स्थिति हो गयी। उन्हें समझ नहीं आ रहा था कि क्या निर्णय किया जाय ?

उसी काल में एक रात्रि को अप्रत्याशित घटना घटी। श्री देवीजी ने बताया था कि वह गम्भीर विचार मग्न होने के कारण न तो ठीक से निद्राग्रस्त थीं और न ही जाग्रत अवस्था में थीं। देखती क्या हैं कि विशाल आभामय कैलाश पर्वत है जहाँ एक विशाल वट वृक्ष के नीचे जटाजूट धारी भगवान श्री चन्द्रमौलि विराजमान हैं। उनके तीसरे नेत्र के दर्शन श्रीदेवीजी को स्पष्ट हो रहे थे। साथ ही यह भी महसूस हो रहा था कि यह अपने शिवालय वाले ही शंकरजी हैं। भगवान श्री चन्द्रमौलि ने अर्धोन्मिलित नेत्रों से संकेत करते हुए कहा 'निश्चिन्त रहो-जाओ' इसके तुरन्त पश्चात श्री देवीजी को बाह्य चेतना हुयी और अब उनका हृदय गृह त्याग के दृढ़ संकल्प से ओतप्रोत था। प्रातःकाल उन्होंने अपना निर्णय और सारी घटना अपनी समवयस्क ताऊजी की एकमात्र पुत्री 'प्रेम' (कालान्तर में श्री महाराज जी चरणाश्रय पश्चात जिन्हें पूज्य कृष्णा जी के नाम से जाना जाता था) को बताया। दोनों बहनें एक दूसरे से सहमत थीं। चुपचाप गेरू की व्यवस्था कर मकान की ऊपरी मंजिल पर गैरिकवस्त्र रंगने की व्यवस्था की और उचित समय की प्रतीक्षा होने लगी।

जिस दिन रात्रि में गृह त्याग किया उस दिन सायंकाल खूब घनघोर वर्षा हुई साथ में ओले भी। नगर व खेतों के रास्तों में सर्वत्र पानी व कीचड़ हो गयी। चैत्र की नवरात्रिका मौसम न सर्दी का होता है और न गर्मी का किन्तु ओले व वर्षा के कारण ठन्डा मौसम होने से सन्ध्याकालीन खानपान-भोजनादि का कार्य घरों में शीघ्र ही निपटाकर लोग अपने-अपने घरों में दुबक गये थे जिससे रात्रि में बस्ती में भी कोई हलचल नहीं थी।

श्री देवीजी व पूज्य कृष्णा बहिन जी के हृदय में उत्कृट वैराग्य व गृह त्याग की भावना कितनी प्रबल थी इसको जानने के लिए प्रसंगानुकूल उनके परिवार के आवास की व्यवस्था पर एक संक्षिप्त दृष्टिपात करना समीचीन होगा। जिस आवासीय परिसर में परिवार रहता था उसका मुख्य द्वार 'फाटक' के नाम से जाना जाता था जो महरावदार इतना ऊँचा व बड़ा था कि हाथी पर सवारी बैठकर उसके अन्दर जा सकती थी। मुख्य सड़क पर इस द्वार (फाटक) में प्रवेश के उपरान्त लगभग 100 मीटर लम्बा व 20 मीटर चौड़ा खुला रास्ता था तथा फिर एक छोटा दरवाजा लगभग 4'×6' का और यहाँ पर 20' ऊँची (परकोटा) दीवार थी। रात्रि को यह दोनों गेट सुरक्षा की दृष्टि से बन्द कर दिये जाते थे। इस छोटे गेट को पार करने के उपरान्त एक छोटा लगभग 100 वर्ग गज का आँगन था जिसमें जल की पूर्ति हेतु कुआँ बना हुआ था एवं तीनों भाइयों के हवेलीनुमा तीन मकानों के अलग-अलग मुख्य द्वार इसी आँगन में खुलते थे। रात्रि को इन द्वारों को भी

बन्द कर दिया जाता था और अन्दर परिवार व बच्चे रहते थे जो अपने-अपने कमरों में रहते थे। इन सभी सुरक्षात्मक क्रियाकलापों का क्रियान्वयन परिवार द्वारा नियुक्त 'धन्नी' नामक परिचारक किया करता था। गजब का संयोग कि उस रात्रि वर्षा-ओले-मौसम ठन्डा, बिजली का प्रकाश तो उस समय पूरे नगर में ही नहीं होने के कारण अंधेरा और किसी व्यक्तिगत कारण से 'धन्नी' नामक परिचारक का भी उस दिन ड्यूटी पर न आना। नवाह पारायण का विश्राम होने के कारण सभी परिवारीजन निश्चिन्त हो थककर सो गये। लेकिन श्री देवीजी व पूज्य कृष्णा जी को नींद कहाँ? ऐसे 'स्वर्णिम' अवसर की तो उनको प्रतीक्षा थी। नमन है श्री देवीजी व पूज्य कृष्णाजी के अदम्य साहसपूर्ण निर्णय को कि विशाल आवासीय परिसर के चार सुरक्षा द्वार, भरा पूरा परिवार, रात्रि का घोर अन्धकार, कुल मर्यादा, स्त्री शरीर, सामाजिक बन्धन सबको धता बताकर भगवान श्री चनद्रमौलि के 'अभय दान-संकेत' को हृदयंगम कर ईश्वर प्राप्ती के चरम लक्ष्य की प्राप्ती हेतु निकल पड़ीं। गृहत्याग के समय गैरिक वस्त्र तो साथ ले लिए और घर के जिन कपड़ों को पहनें थीं उन्हीं को पहनकर चल पड़ीं। प्रखर वैराग्य कोई बन्धन नहीं मानता। रात्रि का अन्धकार, मौसम की प्रतिकूलता, सामाजिक व पारिवारिक मान्यताएँ व बन्धन, शारीरिक भान सब पीछे छूट गये केवल और केवल एकमात्र ध्येय रह गया श्रीकृष्ण के आह्वान पर अपने लक्ष्य की प्राप्ती हेतु बढ़ते जाना।

शिकारपुर नगर की बाह्य सीमा पर सुनसान जगह पर एक विशाल वट वृक्ष था जिसे 'अल्हैया बड़' के नाम से जाना जाता था। यहाँ पर अन्तिम संस्कार के समय पर पिण्ड दान करने का कार्यक्रम स्थानीय लोगों द्वारा सम्पन्न किया जाता था और यहीं से गंगा तट पर अनूपशहर जाने के लिए कच्चा बैलगाड़ी का मार्ग था। इस स्थान की पहचान श्री देवीजी व पूज्य कृष्णा बहिन जी को इसलिए थी कि अपने परिवार के सभी सदस्य कार्तिक पूर्णिमा अथवा अन्य अवसरों पर गंगा स्नान के लिए बैलगाड़ी द्वारा यहीं होकर जाया करते थे। यहीं पर रात्रि के गहन अन्धकार मध्य दोनों बहनों ने अपने वस्त्र बदले। घर के पहने हुए वस्त्र वहीं छोड़ दिये जिन्हें दूसरे दिन पहचान कर परिवार वालों ने इनके अनूपशहर जाने का अनुमान किया।

पूर्व निर्धारित किन्हीं सन्त के आश्रय का निर्णय नहीं था और न किसी विशेष तीर्थ स्थान पर ही पहुँचने का मन में संकल्प था। उस क्षेत्र का एक मात्र धार्मिक तीर्थ स्थान अनूपशहर ही था अतः माँ भागीरथी की शरण में शीघ्रातिशीघ्र पहुँचने का विचार कर पैदल ही नंगे पैर ऊबड़-खाबड़, वर्षा के कारण कीचड़ भरे रास्ते से होते हुए अनूपशहर की ओर प्रस्थान किया। इनके पैरों की गति को कोई भी बाधा रोक नहीं पा रही थी। इस रास्ते पर लगभग 15 किमी चलने के बाद एक स्थान 'ताल बिबियाना' का

चौराहा के नाम से है। यहाँ से चारों दिशाओं को सड़क जाती है। आज वर्तमान समय में तो यहाँ बहुत सी दुकानें, बाजार आदि हो गये हैं किन्तु उस काल में यह निर्जन जंगली स्थान था। यहाँ आकर दोनों बहनों को सूझ नहीं रहा था कि अनूपशहर की ओर कौन सा रास्ता जाता है-तभी!! ईश्वरीय योगक्षेम!! उस अन्धेरे में एक दम सफेद वस्त्र पहने एक व्यक्ति इनके पास आया। अन्धेरे के कारण उसका चेहरा स्पष्ट नहीं हो रहा था। उस व्यक्ति ने पूँछा कहाँ जाओगे? इन्होंने संक्षिप्त उत्तर दिया-अनूपशहर। उस व्यक्ति ने बिना कुछ बोले अनूपशहर की ओर हाथ से संकेत करके मार्ग इंगित कर दिया और दोनों बहनें उस मार्ग पर चलते हुए भगवान भास्कर के आगमन के साथ ही अनूपशहर माँ भागीरथी के तट पर पहुँच गयीं। अपने केश दोनों ने सरदारों की तरह ऊपर सिर पर बाँध रखे थे और गैरिक वस्त्र धारण कर रखे थे। भूख-प्यास कुछ थी ही नहीं! गंगा तट पर बैठ भजन में लीन हो गयीं।

दूसरे दिन प्रात:काल परिवार वालों ने जब दोनों लड़कियों को घर में नहीं पाया तो कोहराम मच गया। आनन-फानन में मन्दिर में सूचित किया गया तथा बुलन्दशहर भी केशव प्रसाद गोयल वकील साहब (श्री देवीजी के चाचाजी) को भी अवगत कराया गया। नगर के चारों ओर सभी दिशाओं में ढूँढ़ने के लिए व्यक्ति भेजे गये। वट वृक्ष के नीचे जो वस्त्र इन्होंने बदले थे उनके प्राप्त होने पर इनके अनूपशहर जाने का अनुमान किया गया अत: इनके चाचाजी (वकील साहब) जो स्वयं भी धार्मिक प्रवृत्ति के थे इनको तलाशने अनूपशहर गंगा तट पर पहुँचे जहाँ दोनों बहनें बैठी मिलीं। चाचाजी ने इन दोनों को देखा और इन दोनों ने भी चाचाजी को देख लिया।

चाचाजी ने बहुत दूर से ही इन दोनों से ऊँची आवाज में कहा "तुम डरना मत-मैं तुम्हें वापस लेने नहीं आया हूँ" और इतना कहकर उन्होंने दोनों को साष्टांग प्रणाम किया। चाचाजी को डर था कि कहीं मुझे देखकर ये लड़कियाँ गंगा में कूदकर जीवनलीला समाप्त न कर लें। इन दोनों ने भी चाचाजी का अभिवादन किया और फिर तीनों माँ भागीरथी के किनारे बैठ गये। काफी देर तक सांत्वनात्मक वार्ता के पश्चात चाचाजजी ने इन्हें समझाया कि घर पर किसी ने भोजन भी नहीं किया है और रोदन का वातावरण बना हुआ है आप लोग केवल एक बार मेरे ऊपर (चाचाजी) विश्वास करके घर चली चलो उसके पश्चात जैसी तुम लोगों की इच्छा होगी मैं स्वयं तुम्हें ले चलूँगा। काफी अनुनय-विनय के पश्चात दोनों ने केवल दो दिन के लिए चलना स्वीकार किया और अनूपशहर से बुलन्दशहर चाचाजी के घर पर तीनों आ गये। एक रात्रि बुलन्दशहर विश्राम करने के उपरान्त तीनों शिकारपुर पहुँचे जहाँ इनको देखते ही उल्लासमय वातावरण छा गया। मिलने के लिए आने वाले लोगों से इन्होंने मिलने से मना कर दिया। इस अवसर पर

इनके पिताजी (सेठ श्री लक्ष्मीनारायण जी गोयल) तथा माताजी ने बड़े प्रेम व लाड़ से हर प्रकार की ऊँच नीच व कठिनाइयों को समझाते हुए अपना निर्णय बदल देने के लिए आग्रह किया। पिताजी का कहना था कि दोनों बहनों के लिए अलग मकान में रहने की व्यवस्था कर दी जायगी। इन लोगों से कोई मिलेगा भी नहीं। ये जैसे भजन करना चाहें घर में रहकर ही कर लें। परिवार के द्वारा विवाह करने के लिए भी नहीं कहा जायेगा। किन्तु इन दोनों के गृहत्याग के दृढ़ निश्चय के आगे पूरे परिवार को नतमस्तक होना पड़ा। फलत: माताजी पिताजी ने दुखी मन से गृह त्याग की अनुमति दे दी। माताजीका तो रो-रोकर बुरा हाल था।

अब यहाँ से इसके बाद आदरणीय चाचाजी की विशेष भूमिका का सूत्रपात हुआ। जैसा कि उन्होंने गंगा तट पर इन दोनों से वचन दिया था कि "तुम जहाँ चाहोगी मैं तुम्हें ले चलूँगा" तो वे भी सपरिवार इनके साथ ही संसार त्यागकर चलने को तैयार हो गये। धार्मिक संस्कार तो पूरे परिवार में थे ही। अत: श्री देवीजी व पूज्या कृष्णाजी दो दिन शिकारपुर रुकने के पश्चात चाचाजी व उनके परिवार (पत्नी व चार बच्चे) के साथ सदैव के लिए गृह त्यागकर चल दिये।

शिकारपुर से सीधे श्री देवीजी, पू. कृष्णाजी व चाचाजी का परिवार ब्रज में श्री गोवर्धन आ गये और श्रीरामदयाल व श्री पुरुषोत्तम पंडा जी के यहाँ रहने लगे। यहाँ पर प्रसंगानुसार यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि गोयल परिवार का पूर्वजों के समय से ही ब्रज के प्रति स्वाभाविक व आत्मिक लगाव था। सम्भवत: इसीलिए सन् 1880 में शिवालय की स्थापना के साथ-साथ श्री दाऊजी महाराज के भव्य मन्दिर का भी निर्माण कराया गया और दोनों बहनों के हृदय में भी श्री कृष्णानुराग के लक्षण स्वाभाविक रूप से बलवती हुए। अस्तु-

चाचाजी श्री केशव प्रसाद जी अपने समस्त परिवार व श्री देवीजी व पूज्या कृष्णाजी के साथ श्री गोवर्धन वास करते हुए श्रीकृष्ण भक्ति में लीन रहने लगे। इसी काल में पूज्या कृष्णाजी ने श्री गिरिराज जी की दण्डवती परिक्रमा कर आराधना की।

गोवर्धन में श्री रामदयाल पंडाजी का मकान पवित्र मानसी गंगा के एकदम किनारे पर था। मकान की छत पर बैठकर मानसी गंगा व श्री गिरिराज मुखारविन्द के स्पष्ट दर्शन होते थे। श्री रामदयाल पंडाजी ने स्वयं बताया कि श्री देवीजी रात्रि को मकान की छत पर जाकर मुंडेर पर बैठ जातीं व भगवन्नाम लेती रहतीं। रात्रि कब और कितनी बीत गयी इसका भान ही नहीं रहता था। कभी-कभी श्री रामदयाल जी को डर रहता था कि कहीं नींद के झोके में कुछ अप्रिय न घट जाय। किन्तु श्री देवीजी की आँखों में नींद कहाँ थी?

इसी प्रकार श्री देवीजी यहाँ दिन में घने निर्जन स्थानों में परिक्रमा मार्ग पर नाम स्मरण हेतु बिना कुछ खाये-पीये निकल जातीं और नाम स्मरण में तल्लीन रहतीं। श्री रामदयाल जी को जब इसका पता चलता तो दही की लस्सी या छाछ लेकर निर्जन स्थानों पर जाकर 'विमला-विमला' (श्री देवीजी का पूर्वाश्रम नाम) कहकर आवाज लगाते। श्री देवीजी द्वारा संकेत प्राप्त होने पर उन्हें पिलाकर वापस लौटते।

श्री देवीजी के हृदय में प्रखर वैराग्य हिलोरें ले रहा था और वह जल्द से जल्द प्रियतम श्रीकृष्ण दर्शन करना चाहती थीं चाहे उसके लिए कुछ भी साधन करना पड़े। एक साधु द्वारा यह कहे जाने पर कि यदि 40 दिन तक श्री मानसी गंगा का चुल्लू भर जल पीकर आराधना की जाय तो श्रीकृष्ण दर्शन हो जायेगा इन्होंने उसी प्रकार आराधना प्रारम्भ कर दी। एक सप्ताह के पश्चात भगवान श्री चन्द्रमौलि, जिनके संकेत से इन्होंने गृह त्याग का दृढ़ निर्णय किया था, ने स्वप्न में कहा कि 'तुम्हारे इस प्रकार निराहार रहने से मुझे कष्ट होता है। थोड़ा सा अल्पाहार अवश्य लिया करो'- तब से इन्होंने अल्प मात्रा में भोजन लेना प्रारम्भ कर दिया।

जैसा कि पूर्व में लिखा जा चुका है श्री गोवर्धन में श्री देवीजी के चाचाजी श्री केशव प्रसाद गोयल व उनका परिवार भी साथ ही था जो कि अपनी आराधना-परिक्रमा आदि में लीन था। यहीं पर अपनी त्यागमयी उच्च प्रवृत्ति व भक्ति के कारण श्री चाचाजी ने अपने परिवार के समस्त आभूषण-गहने (सीतारामी व अन्य जेवरात) श्री गिरिराज जी के चरणों में सेवार्थ अर्पण कर दिया। यह जानकारी श्री रामदयाल जी पंडा व उनके बड़े भाई श्री पुरुषोत्तम जी पंडा ने मुझे व परिवार के अन्य सदस्यों को दी थी। इस प्रकार श्री देवीजी, पूज्या कृष्णाजी व चाचाजी सपरिवार यहाँ अपने-अपने तरीके से श्रीकृष्ण साधना में लीन थे।

श्री गिरिराज गोवर्धन या ब्रजक्षेत्र शिकारपुर नगर से अधिक दूर नहीं कहा जा सकता। अत: श्री देवीजी व पूज्या कृष्णाजी को संदेह रहता था कि कहीं कोई कभी परिवारीजन यहाँ आकर साधना में विक्षेप न करें अत: यहाँ से कहीं अधिक सुदूर प्रान्त में चला जाय। फलस्वरूप समस्त परिवार ने लगभग एक माह तक ब्रज दर्शन उपरान्त गुजरात श्री द्वारिका धाम जाने का निर्णय किया। द्वारिका धाम पहुँचकर सभी ने प्रेमपूर्व श्री द्वारिकाधीश जी के दर्शन किये व कुछ दिन वहीं रहकर साधना की। तत्पश्चात द्वारिका से श्री गिरिनार जी दर्शन के लिए सभी ने प्रस्थान किया।

गिरिनार गुजरात प्रान्त के जूनागढ़ जिले में सबसे ऊँचा पर्वत है। कई चोटियाँ हैं। लगभग दस हजार सीढ़ियाँ व कठिन मार्ग की चढ़ाई उपरान्त सबसे ऊपर की चोटी पर कई जैन मन्दिर व भगवान दत्तात्रेय का मन्दिर है जिसे दत्तात्रेय चरण पादुका के नाम से भी

जाना जाता है। बीच मार्ग में और भी कई मन्दिर जैसे गोरखनाथ मन्दिर व कालका मन्दिर व कई जैन मन्दिर भी हैं।

यहाँ की एक घटना श्री देवीजी से विशेष रूप से जुड़ी हुई है। भगवान दत्तात्रेयका मन्दिर सबसे ऊपर शिखर पर स्थित है अतः हर कोई यात्री वहाँ तक नहीं पहुँच पाता। किन्तु दृढ़ निश्चयी हमारी श्रीदेवजी कहाँ मानने वाली थीं। एक दिन अकेले ही सीढ़ियाँ चढ़कर ऊपर पहुँच गयीं। भगवान भास्कर तब तक अपनी यात्रा पूरी कर चुके थे और अँधेरा बढ़ना प्रारम्भ हो गया था। मार्ग बीहड़ जंगली व सुनसान तो था ही। रात्रि होने के कारण कोई यात्री भी न था। फलतः वहीं एक चबूतरा पर बैठ गईं। गिरनार पर्वत गुजराज का सबसे ऊँचा पर्वत होने के कारण बहुत ठन्डा रहता है अतः श्री देवीजी ठन्ड के कारण सिकुड़ने लगीं। शरीर सुन्न सा होने लगा। हाथ पाँव ने हिलना डुलना बंद कर दिया। वहीं पास में एक वृद्ध महात्मा धूनि प्रज्वलित कर एक कुटिया में रहा करते थे। उन्होंने श्री देवीजी को देखा और स्थिति समझ गये। श्री देवीजी से कुटिया पर चलने को कहा पर श्री देवीजी तो चल भी नहीं पा रही थीं फलतः वह महात्मा जी श्रीदेवीजी को अपनी गोद का सहारा देकर कुटिया पर ले गये और 'धूना' के आगे बैठाया। कुछ देर आग की गर्मी पाने के पश्चात श्री देवीजी सहज हुईं। सारी रात श्री देवीजी ने वहाँ 'धूना' के पास बैठकर ही हरिनाम स्मरण करते हुए रात बितायी और प्रातःकाल नीचे अपने शिविर के लिए प्रस्थान किया।

प्रभाष क्षेत्र दर्शन व चाचाजी के परिवार का वापस आना व चाचाजी से भी अलग होकर साधना करना-

गिरिनार यात्रा के पश्चात श्री देवीजी पूज्या कृष्णाजी, चाचाजी व परिवार सौराष्ट्र में सोमनाथ के निकट स्थित प्रभास क्षेत्र के दर्शन हेतु प्रस्थान किया। प्रभास क्षेत्र वह स्थान है जहाँ श्रीकृष्ण ने अपनी लौकिक लीला का संवरण किया था। यहाँ श्रीकृष्ण का सुन्दर विग्रह स्थापित भव्य मन्दिर है। यहाँ भगवदीय इच्छानुसार घटनाक्रम कुछ अप्रत्याशित तरीके से घूमा और चाचाजी के परिवारीजनों में से किसी ने वापस शिकारपुर लौटने का इच्छा पत्र व मिलने के लिए स्थान की सूचना डाक द्वारा शिकारपुर दे दी। पत्र प्राप्त होते ही शिकारपुर से श्रीदेवीजी के ताऊजी के पुत्र श्री ओंकार प्रसाद गोयल (पूज्या कृष्णाजी के सहोदर भ्राता) व श्रीदेवीजी की बड़ी बहिन चन्द्रप्रभा गर्ग के पति श्री हरप्रसाद गर्ग प्रभास क्षेत्र पहुँच गये। वहाँ चाचीजी व परिवारीजनों ने वापस शिकारपुर चलने की इच्छा प्रगट की। चाचीजी का कहना था कि इस प्रकार सभी अवयस्क बच्चों को लेकर जीवन भर कैसे घूमते रहना सम्भव होगा? किन्तु चाचाजी ने वापस घर लौटने

के लिए स्पष्ट मना कर दिया। श्रीदेवीजी व पूज्या कृष्णाजी का तो प्रश्न ही नहीं था! अत: श्री ओंकार प्रसाद गोयल व श्रीहरप्रसाद गर्ग आदरणीय चाचाजी के परिवार को वापस शिकारपुर ले आये और अब केवल श्री देवीजी पूज्या कृष्णाजी व आदरणीय चाचाजी ही वहां रह गये। यहाँ दोनों बहनों ने आदरणीय चाचाजी से भी अलग विचरण कर साधना करने की इच्छा व्यक्त की जिसे आदरणीय चाचाजी ने सहर्ष स्वीकार कर दोनों को स्वतन्त्र रूप से विचरण करने की अनुमति प्रदान कर दी। क्योंकि अब तक वह इनके वैराग्य, ध्येय निष्ठा व दृढ़ भक्ति आस्था को देख चुके थे। अपने बारे में भी उन्होंने संसार को त्याग कर असंग रहने का कठोर निर्णय ले लिया था क्योंकि वह संसार की असारता से भिज्ञ थे एवं उच्च वकालत शिक्षित, सम्पन्न धनी परिवार से समबद्ध होते हुए भी संसार को त्यागने में एक क्षण की भी देरी नहीं की। चल-अचल सम्पत्ति पत्नी बच्चों का मोह, विशाल जनसम्पर्क एवं किसी प्रकार की सांसारिक ऊहा-पोह उनका मार्ग रोक नहीं पाई।

यहाँ से तीनों की यात्रा अलग तो हुई किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि चाचाजी 'कमठ अन्ड की नाँई' दोनों बहनों के समाचार लेते रहते थे क्योंकि उनका शरीर नर्मदा किनारे 'खलघाट' में पूरा हुआ और दोनों बहिनें उस समय बड़वाह सेठ जगन्नाथ जी की 'जीन' में थीं। श्री देवीजी को इसकी जानकरी उनके अस्वस्थता काल में महेश्वर दी गयी थी और सन्यासी महात्मा की तरह जल समाधि के लिए उन्होंने निर्देश दिया था।

चाचाजी व उनके परिवार से अलग होकर अपनी साधना को और अधिक तीव्र करने की उत्कंठा संजोये दोनों बहनें राजकोट, राधनपुर, हारिजपुर होते हुए मोरवी स्टेट पहुँच गयीं। राजकोट में पूज्या कृष्णाजी के बहुत से भक्त बन गये। दोनों सन्यासी बहनों के दर्शन हेतु जनसमूह उमड़ता रहता था किन्तु यह नीचे दृष्टि किये बैठी रहतीं व किसी से कोई बात नहीं करती थीं। संन्यासी वस्त्र पहने दोनों बहनों का चित्र राजकोट का ही है। इसी काल में आपका परिचय श्री विट्ठल जी व उनके भाई मणि भाईजी से हुआ। श्री विट्ठल जी श्रीमहाराज जी के चरणाश्रित होकर बाद में साधु वेष अंगीकार श्रीधाम वास कर साधनारत रहे। श्री देवीजी के प्रति श्री विट्ठल जी की विशेष मातृत्व पूर्ण श्रद्धा थी। एक बार पूज्य श्रीमहाराज जी के सान्निध्य में 1980 में शिकारपुर में श्रीमद्भागवत सप्ताह के आयोजन हेतु प्रवास के समय श्री विट्ठल जी ने शिकारपुर नगर पहुँचने पर बस से उतरकर साष्टांग प्रणाम किया इस भावना से कि 'यह पूज्या श्री देवीजी की जन्मभूमि है'। अस्तु-

मोरवी स्टेट पहुँचकर दोनों बहनें निर्जन जंगल में एकान्त स्थान पर साधनारहत रहने लगीं किन्तु कुछ असामाजिक तत्वों द्वारा इनकी साधना में विघ्न डाला जाने लगा। दर्शन करने के लिए आने वालों के माध्यम से समाचार प्राप्त कर वहाँ के राजा भी आपके

दर्शनों को आये। जब उन्हें पता चला कि कुछ असामाजिक तत्वों द्वारा आपको विक्षेप किया जाता है तो उन्होंने आपकी व्यवस्था जंगल में स्थित एक शिवालय में करा दी और सुरक्षा के लिए पुलिस का पहरा बैठा दिया जिसकी जानकारी इनको नहीं थी। मन्दिर के पुजारी ने बड़े मनोयोग व श्रद्धा से आपकी सेवा की। कुछ यहाँ साधनारत रहने के उपरान्त आप श्री नाथद्वारा पहुँच गयीं। श्री नाथद्वारा कुछ समय व्यतीत करने के उपरान्त आपके मन में नर्मदा किनारे कहीं एकान्त में साधना करने का विचार हुआ और आप कभी पैदल कभी ट्रेन से यात्रा करते हुए ओंकारेश्वर ज्योर्तिलिंग पहुँच गयीं।

ओंकारेश्वर द्वादश ज्योर्तिलिंगों में से एक स्थान है। यहाँ ममलेश्वर में एक कुटिया में रहकर आप साधना करती रहतीं। एक बार एक साधु के कहने पर कि चालीस दिन निराहार व्रत रखने पर अवश्य भगवद् दर्शन होता है आपने निराहार व्रत प्रारम्भ कर दिया। किन्तु चार दिन पश्चात भगवान श्री चन्द्रमौलि ने स्वप्न में कहा "इस प्रकार निराहार न रहो। कुछ अल्पाहार अवश्य लो। मुझे कष्ट होता है।" उसके पश्चात श्री देवीजी ने अल्पाहार लेना प्रारम्भ कर दिया।

इसी प्रकार वहाँ पर किसी के यह कहने पर कि नर्मदा जी कभी किसी को भूखा नहीं सोने देतीं। यह मन्दिर की सबसे ऊपरी तीसरी मंजिल पर जाकर एक कमरे में बैठ गयीं। दूसरे दिन एक बालिका लोटे में दूध लेकर आयीं और कहा 'मेरी माँ ने आपके लिए दूध भेजा है।' दूध का लोटा शाम के समय देने के लिए नीचे आयीं तो आपको ज्ञात हुआ कि वहाँ तो दूर-दूर तक इस वय की कोई बालिका अथवा स्त्री नहीं रहतीं। साधु ने कहा निश्चित ही वह नर्मदा जी होंगी।

ओंकारेश्वर के पास ही नर्मदा तट के घने बीहड़ जंगलों में 'धावड़ी कुंड' है। वहाँ दर्शन करने हेतु आप दोनों पैदल ही गयीं। लौटते समय रास्ता भटक जाने के कारण रात हो जाने पर आप आठ-दस झोंपड़ियों के एक स्थान को साफ कर विश्राम हेतु लेट गयीं। यह एक छोटा सा गाँव था जहाँ के लोग हिंसक जंगली जानवरों के भय से गाँव पलायन कर गये थे।

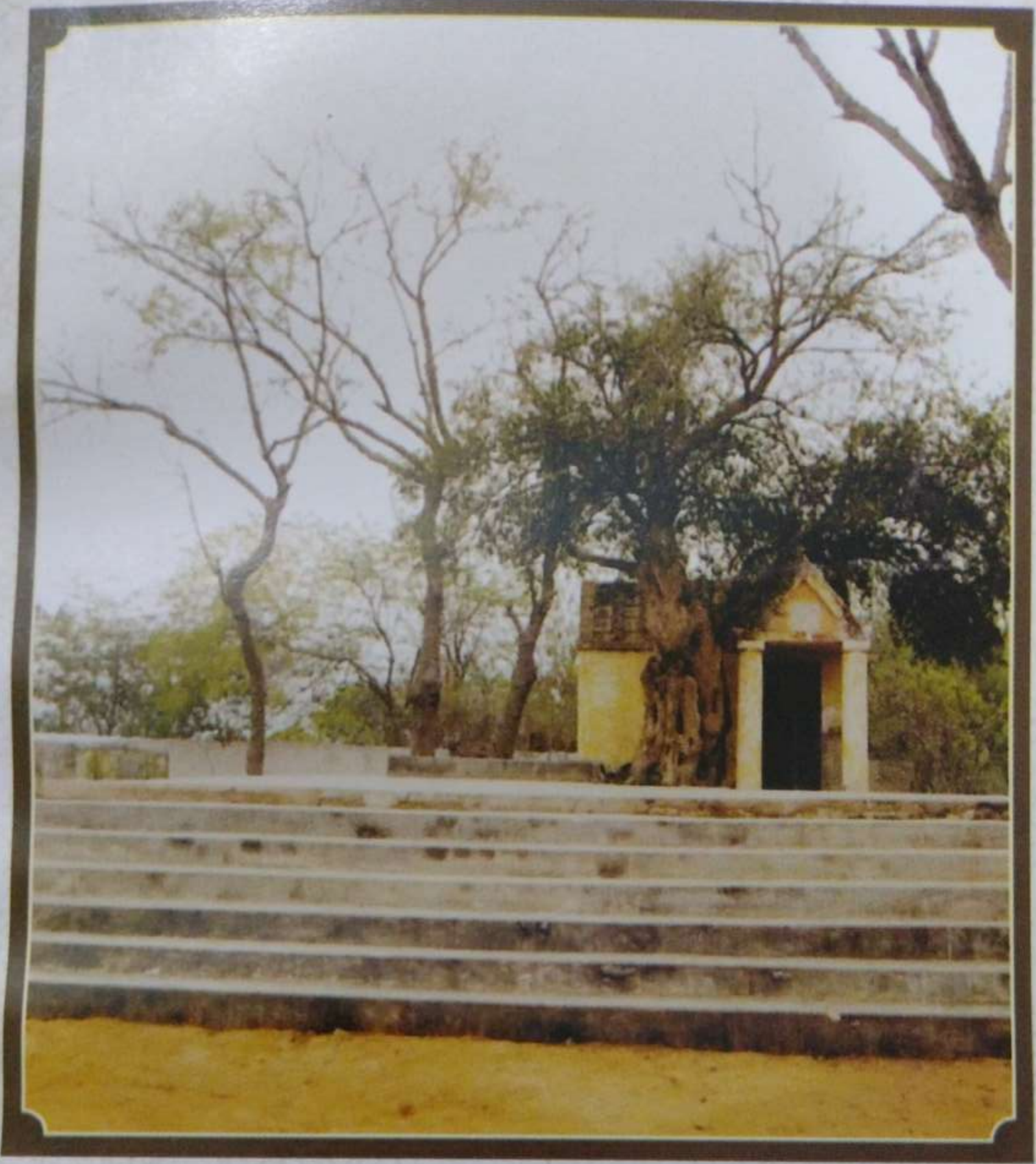
रात को अचानक कुछ लोग हाथों में मशाल लिए और शोर करते हुए आते दिखे। किसी अनिष्ट की आशंका तो हुई किन्तु दोनों बहनें डरी बिल्कुल नहीं। कुछ और पास आने पर उन लोगों में से एक ने कहा कि 'मुझे स्वप्न हुआ है कि जंगल में दो तपस्वी बालिकाएँ लेटी हुई हैं। जाकर उन्हें जल पिलाओ'। यह स्थान सुरक्षित नहीं है। आप हमारे साथ चलितए अन्यथा यह जल पी लीजिये। दोनों उन गाँव वालों के साथ चली गयीं और अगले दिन पैदल ही वापस ओंकारेश्वर आ गयीं। कुछ दिन ओंकारेश्वर में साधनारत रहकर पैदल यात्रा कर चोरल संगम होती हुई बड़वाह पहुँच गयीं और वहाँ से बस द्वारा

महेश्वर पहुँचीं जहाँ ब्रजवासी श्री बाबूलाल कन्डक्टर से आपका परिचय हुआ। श्री बाबूलाल जी ने आपको श्री जगन्नाथ सेठ की 'जीन' में ठहराया जहाँ आप केवल थोड़ा सा दूध लेकर चौबीस घंटे साधना में लीन रहती थीं। यहाँ गाँव-गाँव से गाड़ियों में भरकर आपके दशनों को लोग आने लगे। आप केवल दो घंटे के लिए दर्शनार्थ उपलब्ध होती थीं। कुछ समय साधनारत रहकर यहाँ से नर्मदा किनारे पैदल चलती हुईं 'खलघाट' पहुँचीं। खलघाट में श्री देवीजी को तेज बुखार हो गया जो टायफायड में बदल गया। उधर महेश्वर में 'जीन' वाली सेठानी को स्वप्नादेश हुआ कि 'उनकी सेवा करो'। श्री देवीजी को महेश्वर बुलाया गया और एक सम्भ्रान्त सद्गृहस्थ श्री रामचन्द्र राव के परिवार में आपके रहने व सेवा-चिकित्सा आदि की व्यवस्था की गयी। श्री देवीजी का यह अस्वस्थता काल लगभग एक माह चला। यहाँ की एक योग क्षेम घटना अपने आप में निराली है।

अत्यधिक बुखार एवं कमजोरी के कारण श्री देवीजी को एक भी शब्द बोलना या हिलना-डुलना सम्भव न था। कमजोरी एवं शिथिलता हद दर्जे की थी। अस्वस्थता काल में इनको अपने सिरहाने एक दिव्य आभामय स्वरूप वाली स्त्री के दर्शन होते थे। पूँछने पर उस स्त्री ने बताया-

तुम बोल नहीं सकती अत: समय-समय पर दवा-जल आदि पिलाने के लिए घर के लोगों को प्रेरित करती रहती हैं। तुम्हारे अतिरिक्त हमें कोई और नहीं देख सकता। इसी प्रकार श्री देवीजी अपने पैरों के पास दो सजे धजे देव स्वरूप बालकों को लेटे हुए देखती थीं। पूछने पर उन्होंने बताया-"हम शक्ति स्वरूप में आपकी सहायता करते रहते हैं। हमें भी आपके सिवा कोई देख नहीं सकता।"

लगभग एक माह पश्चात स्वास्थ्य लाभ करने के उपरान्त अपने लक्ष्य की खोज में चल पड़ीं। एक दिन श्री देवीजी ने नितान्त असंग रहकर भगवत् प्राप्ती की साधना में लीन रहने का विचार श्री कृष्णाजी के सम्मुख रखा जिसे उन्होंने भी स्वीकार किया और दोनों बहनें नितान्त अकेले घोर विरक्ति पूर्वक साधना पथ पर अग्रसरित हो गईं। श्री देवीजी आगामी एक वर्ष तक नर्मदा के बीहड़ों में तितिक्षापूर्वक साधना करती रहीं फलस्वरूप 1947 में प्रात: स्मरणीय श्री महाराज जी जैसे सिद्ध सन्त का आश्रय एवं अखण्ड ब्रजवास प्राप्त हुआ।



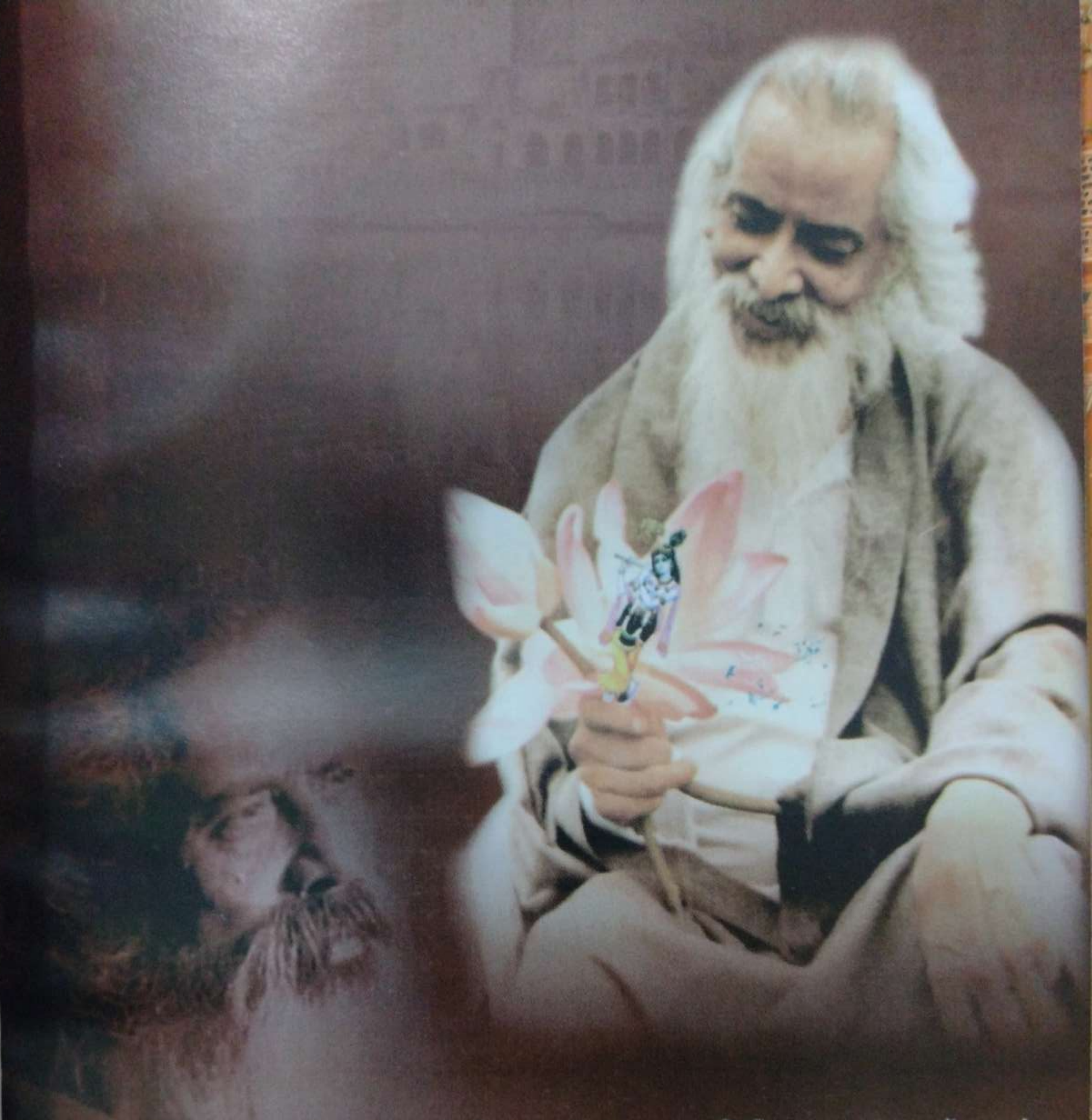
पूज्य महाराज जी की भजन स्थली (गुफा)
यशोदाकुण्ड, नन्दगाँव

मन रे! छिन ब्रजरज में रहिये।
जहाँ श्री राधा श्याम लीला, मिलहीं नित अनुरागी।
सनक नारद शिव विशारद, शुक विरंचिहि लागि॥
सखा परम विज्ञान ऊधो, रजकणहि ते बड़ भागि।
गोपी पद रज रसिक बल्लभ, कृपा प्रेमहि पागि॥
महा अर्णव विषय जीवन, लोक परसुख त्यागिं
प्रभात गोकुल धाम सुनि नव 'अलि' हि जीवन जागि॥



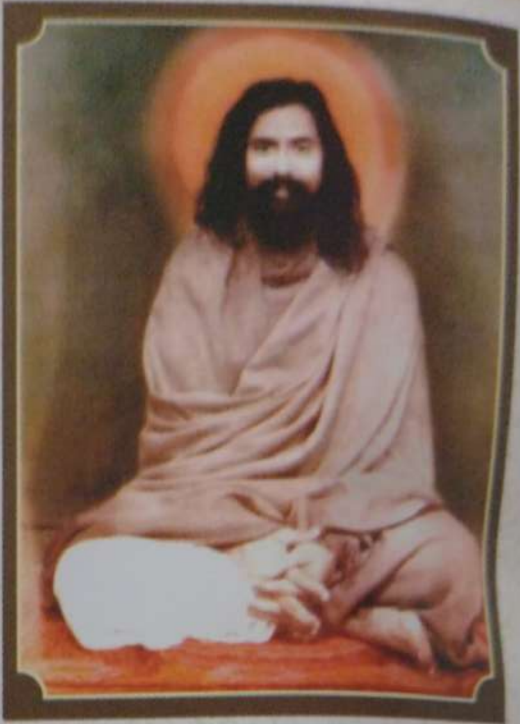
रस निर्झर

- प्रातः स्मरणीय परम पूज्य श्रीमहाराज जी का चरणाश्रय
- रसमयी कृपा किरण
- अखण्ड व्रजवास



श्रीराधा चरण रसामृत सिंचित रजकण लहौं लवलेश।
परम उदार बिहार वनान्तर गृह नव नित्य विशेष॥
अति विपरीत रीति रस ब्रजवधु लंपट जहँ अनिमेष।
अद्भुत कृत नित केलि मधुरिमा 'अलि' वरणें विश्शेष॥

प्रातः स्मरणीय श्री महाराज जी का चरणाश्रय, रसमयी कृपा किरण एवं अखण्ड ब्रजवास



अपनी अत्यधिक अस्वस्थता के पश्चात् स्वास्थ्य लाभ कर श्रीदेवी जी पुनः एकान्तिक साधना पथ पर अग्रसित हो अपने चरम गन्तव्य लक्ष्य की प्राप्ति हेतु चल पड़ी। आप नितान्त अकेली निर्भय नर्मदा के बीहड़ों में साधनारत किसी सद्गुरु का आश्रय प्राप्त कर भगवद् दर्शन की लालसा सजोये थीं। किन्हीं सिद्ध सन्त का आश्रय मिलने का संकेत आपको गृहत्याग के पूर्व में ही मिल भी चुका था।

पूज्य श्री मनोहर बाबा को प्रातः स्मरणीय श्रीश्री महाराज जी का चरणाश्रय श्रावण मास 1945 में प्राप्त हो चुका था और आप वृन्दावन में श्री श्रीजी के चरणों में रहकर गंगा मन्दिर में साधनारत थे। श्री श्रीजी के प्रवास काल में भी आप श्री महाराज के सान्निध्य में रहते थे।

सन् 1946 के अन्त में एक बार पूज्य श्री श्रीमहाराज जी मण्डलेश्वर प्रस्थान के लिये मथुरा जंक्शन पर ट्रेन में खिड़की के सहारे विराजमान थे और श्री बाबा मनोहर दास जी प्लेटफार्म पर खिड़की के सहारे खड़े होकर श्री महाराज जी से चर्चा कर रहे थे। तभी पूज्य श्री श्रीमहाराज जी को 15-16 वर्ष की आयु की एक बालिका स्फुरित हुयी, "मुझे वृन्दावन वास करा दो"। पूज्य श्री महाराज जी ने बाबा से कहा-पता नहीं कौन बालिका स्फुरित हो रही है।

उसी प्रवास काल में एक बार पूज्य श्री महाराज जी को धरगाँव से मण्डलेश्वर जाते समय रास्ते में उसी प्रकार बालिका की स्फूर्ति हुयी। जो कह रही थी "मुझे वृन्दावन वास करा दो"। उसके कुछ काल पश्चात् पूज्य श्री महाराज जी वसंत पंचमी के आसपास 1947 में महेश्वर प्रवास पर थे और अवन्तिका बाई नाम की भावुक महिला के घर ठहरे थे। नगर एवं स्थान-स्थान से आवाल वृद्ध नर-नारी आपके दर्शनों के लिये आते थे एवं सत्संग तथा संकीर्त्तन की धूम मची थी।

एक दिन ब्रजवासी श्री बाबूलाल जी कन्डक्टर संन्यासी वेष धारिणी श्रीदेवी जी को

लेकर पूज्य श्री श्रीमहाराज जी के दर्शनों के लिये पहुँचे। प्रणाम-माल्यार्पण करने के उपरान्त आपने देवीजी के बारे में बताया कि ये साधनारत भ्रमण करती हुयी यहाँ आयीं तथा बड़वाह में सेठजी के बगीचे में शिव मन्दिर में ठहरी हुयी थीं। मेरा इनका लगभग दो वर्ष का परिचय है। क्योंकि मुझे अपने सर्विस के कार्य से इधर जाना होता है। मुझे आपके महेश्वर में विराजमान होने की जानकारी थी। ये कहीं जाने के लिये इन्दौर में बस से उतरकर रेलवे स्टेशन जाने वाली थी कि मेरी बस भी वहीं आकर रुकी और मैंने इन्हें देखकर प्रणाम निवेदन करने के उपरान्त आपके (श्री श्रीमहाराज जी) दर्शन करने का निवेदन किया। कुछ सकुचाते हुए इन्होंने यहाँ आने की स्वीकृति दे दी।

श्री देवीजी पूज्य श्री श्रीमहाराज जी के समक्ष बैठी थी और श्रीमहाराज जी उस समय श्री जयदेव जी का श्रीकृष्ण रूपमाधुरी पद गा रहे थे। श्रीदेवी जी को देखते ही संकेत से श्री बाबा से कहा कि यही वह बालिका है जो दो बार स्फूर्त हुयी थी।

प्रथमत: मिलन पर श्रीदेवी जी ने मन में विचार किया कि सुन्दर पद गाकर कीर्तन आदि में पारंगत सात्विक साधु हैं। किन्तु श्रीदेवी जी अवन्तिका बाई के यहाँ 15 दिन रहीं। इस काल में पूज्य श्री श्रीमहाराज जी की विचित्र भाव स्थिति, मूर्च्छा, कीर्तनावेश में नृत्य एवं गूढ़ गम्भीर सत्संग का श्रीदेवी जी के सरल-विमल, भगवत् विश्वासी, तितिक्षापूर्ण साधनारत अन्त:करण पर गहरा प्रभाव पड़ा और इन्होंने अपने-आपको पूज्य श्री श्रीमहाराज जी के चरणों में समर्पित कर दिया। अब ये पूर्णरूपेण श्री महाराज जी को अपना सद्गुरु स्वीकार कर चुकी थीं। श्री महाराज जी के साथ ही श्री वृन्दावन आ गयीं और श्री मोतीराम जी माँजी श्री बाबा (मनोहर जी) और श्रीश्री महाराज जी के साथ रहने लगी तथा श्री श्रीजी के निर्देशानुसार रसमयी उपासना एवं अखण्ड नाम जप में संलग्न हो गयीं। प्रति दिन अन्धेरी कोठरी में बैठकर तीन लक्ष नाम जाप आपका नियम था।

यहाँ एक अद्भुत प्रसंग का उल्लेख करना आवश्यक है। श्रीदेवी जी ने बताया कि वह महेश्वर में जिस परिवार के साथ ठहरी थीं उन्होंने (परिवारीजन) एक दिन व्रत रखा था। उत्सुकतापूर्वक श्रीदेवी जी ने उपवास करने का प्रयोजन पूछा तो पता चला कि "मनोकामना पूर्ति" हेतु श्री गणेश चतुर्थी का व्रत है। श्रीदेवी जी के मन में किन्हीं सन्त की खोज तो थी ही, अत: उस दिन उन्होंने भी उपवास रखा और अगले दिन श्री श्रीमहाराज जी का दर्शन आपको हो गया। श्रीदेवी जी के अन्त:करण में सदैव गणेश चतुर्थी के प्रति विशेष आकर्षण रहा और सदैव किसी न किसी परिकर के व्यक्ति को मन्दिर भेजकर गणेश जी का भोग लगवाया करती थीं। एक बार पूज्य श्री श्रीजी के स्वास्थ्य निमित्त भी आपने एक वर्ष यह व्रत किया था। इसके अतिरिक्त एक बार परिकर के एक भक्त को भी यह व्रत करने के लिये निर्देशित किया था। अस्तु-

प्रातः स्मरणीय श्री महाराज जी की शरण में आकर श्रीदेवी जी का नाम, जप, सत्संग व श्री श्रीजी के सुख-रुचि अनुसार कार्य करने के अलावा कोई संसार नहीं था। श्री गंगा मन्दिर का दिव्य वातावरण इसमें सहायक था। पाठकगण इसके संदर्भ में पूज्य बाबा द्वारा रचित "चरितवैभव" में विस्तार से पढ़ सकते हैं। यहीं पूज्य श्री महाराज जी को 1947 पौष-माघ मास में प्रथम भावोन्माद हुआ था। श्री देवीजी व बाबा की प्रत्येक क्रिया, प्रत्येक विचार, साधना सभी कुछ श्रीश्री महाराज जी पर केन्द्रित था। पूज्य श्री मनोहर जी बाबा के ही शब्दों में- "उस समय गंगा मन्दिर में श्रीजी का वातावरण इतना मद भरा रहता था कि खान, पान, आराम की सुधि भी नहीं रहती थी। श्रीजी भगवद् प्रेम के नशे में चूर रहते एवं अन्य सबको भी सराबोर करते रहते। × × × × श्रीजी के रहते हुए खाने-पीने की कभी इच्छा नहीं होती थी। कोई व्यवहारिक जगत भी है-इसका विचार तक नहीं आता था। गंगा मन्दिर इन दिनों सत्संग का भवन था, या यदि ये कहें कि गंगा मन्दिर में इन दिनों भाव तथा आनन्द का साम्राज्य था तो किंचित भी अतिशयोक्ति नहीं होगी"। (चरित वैभव पृष्ठ 110)

1947 के काल खण्ड में ही श्रीदेवी जी को पूज्य श्री महाराज जी की कृपा किरण प्राप्त हुयी और उन्होंने निज स्वरूप (गोपी भाव) को जाना। इसकी विशेष जानकारी इसी अध्याय में 'चमत्कारी खिचड़ी' नामक शीर्षक के अन्तर्गत पठनीय है।



प्रसन्न मुद्रा में
पूज्या श्रीदेवी जी

सन् 1947 के अन्त में श्री श्रीमहाराज जी ने श्रीदेवी जी द्वारा अपने वृन्दावन वास का समाचार पत्र द्वारा शिकारपुर पिताजी को कराया जो श्रीदेवी जी के हस्तलेख में इस प्रकार है-

श्री राधे — [illegible]स्थली श्री वृन्दावन धाम

मोर मुकुट की लटक पर अटक रही दृग मोर
कान्ह कुंवरि लखे यमुन तट नृत्यत नन्द किशोर॥

अब मन चल वृन्दावन रहिए।
जहां विहरत नित युगल माधुरी तिनके दरशन पैये।
भूख लगे तो व्रजबासिन के टूक मांग कर खैये।
प्यास लगे तो यमुना तीरे अमिय सरस रस पीजे।
पुनि वंशीवट तरु वर निशदिन राधे राधे गैये।
व्यास स्वामिनी की छवि निरखत विमल २ यश गैये॥
अब चल मन वृन्दावन रहिये॥

पूज्य, पिताजी चरणों में दण्डवत स्वीकार हो।

मैं ३॥ (साढ़े तीन) साल से श्री धाम वृन्दावन वास कर रही हूं। आपको मैंने इसलिए सूचना नहीं दी थी, कि मुझे शंका थी कि शायद आप मुझे भली पथ में कुछ विघ्न करें। क्षमा करें मेरे इस कलुषित विचार पर, आपको तो मेरी मालुम की करने की जरूरत नहीं है कि कहां रहे। आप भी ढूंढ २ कर परेशान हो गये; आपको बहुत ही कष्ट हुआ, मेरे कारण से आपका लोक में अपमान भी हुआ, मैं इसकी भी परवा न कर आपका कुछ विचार न किया, और अपना ही जीवन को सुधारने की कोशिश में थी, जिस लिए कि इतना सुन्दर मनुष्य जन्म मिला उसे सार्थक करना ही कर्तव्य है, न कि उसको इस दुःख संसार में ही समाप्त कर देना अच्छा है। यदि मैं उस समय सब की बात मान लेती तो अब तक न मालुम कितने सुख दुखों का सामना करना पड़ता, जिस वस्तु को हम भोगने से सुख समझते हैं, परिणाम में वह ही अत्यन्त ही दुखदाई हो जाती है। आपको तो इसका पूर्ण

अनुभव है इस वर्तमान स्थिती को देखकर। जैसे सुख भी होता है- क्षणिक है, नित्य नहीं है, इसलिए विचार होता है कि नित्य सुख भी होता है कोई, जब क्षणिक सुख है तो नित्य सुख भी होगा अवश्य। इसका विचार तो अवश्य होता ही होगा, आपको मालुम ही है। आपके ही सुविचारों से, संचित पुण्यों से ही मुझे ऐसी सुबुद्धी प्राप्त हुई, कि नित्य सुख को ढूंढना चाहिए, घर से निकल पड़ी श्री कृष्ण का योग क्षेम भी मिलता गया, उन्होंने अपने धाम में भी लाकर पटक दिया, अब तो मुझे पूर्ण विश्वास होगया कि कोई न कोई दिन ऐसा अवश्य आयेगा कि अपना जीवन को सार्थक करूंगी पूर्ण से मिलकर। वह दिन कब आवेंगे माई।

जा कारण हम देह धरी है मिलवो अंग लगाई।
हौं जानूं जब हिलमिल खेलूं तनु मन प्राण समाई।
या कामना करो परिपूरण समरथ हो रमराई॥

बस वह दिन कभी अवश्य आयेगा ही, जब उन्होंने यहाँ तक कृपा की है, तो इस अभिलाषा को भी खाली क्यों जाने देंगे। आपके कुल को कलंकित नहीं करूंगी, भगवत कृपा से उज्ज्वलित ही हो जायेगा। यह मैं आपके लिए उपदेश नहीं लिख रही हूं। यह मेरे हृदय के विचारों को लिख रही हूं। इसे उपदेश न समझ लेना मैं उपदेश देने योग्य नहीं हूं। आपसे लेने योग्य ही हूं। आप तो ज्ञाता होते ही। अब आप से एक प्रार्थना और है मेरी स्वीकार करें तो, अपनी कुटिलता वश आपसे कहती हूं-

अब आपका गृहस्थ जीवन तो हो ही चुका। अकस्मात ही मृत्यु सिर के ऊपर खेल रही है न मालुम किस समय ले जाय। अब एक बार श्री धाम वृन्दावन का दर्शन कर आइये, जहाँ पर रजकण स्पर्श होने मात्र ही से नवजीवन आरम्भ हो जाता है। कृत जीवन के पाप सूखी घास सरीखे जल जाते हैं, उस वृन्दावन के एक बार दर्शन कीजिये, जहां पर श्री युगल विहार ~~अभी भी करि~~ नित्य वर्तमान है। श्री मीरा जी, बिल्वमंगल, श्री कृष्ण चैतन्य महाप्रभू जी तथा उनके कृपा पात्र भक्त, रूप सनातन वगैरा, और भी न बहुत से भक्त हैं, जैसे कीर्ति बाई इन लोगो ने वृन्दावन में अनेरा करते ही श्री राधा कृष्ण दर्शन किया उस वृन्दावन का दर्शन जीवन में एक बार तो कीजिये ही फिर देखिये जो जीवन में कभी आनन्द न आया होगा जो यहां पर आ जायेगा। लाभ, हानि तो सदा होते ही हैं उनको भगवान के ऊपर छोड़ कर अब तो जीवन बिताना अच्छा है, न मालुम फिर मनुष्य जन्म मिले या न मिले। इसी जन्म में जो कुछ कर लिया तो कर लिया, आगे का कुछ विश्वास नहीं। कोई कितना भी पापी, दुराचारी क्यों न हो यदि भगवान की शरण हो जाय, तो वह इतने दयालु, करुणा सागर हैं कि उसके अपराधों को न देखते हुवे हृदय से तुरन्त ही दौड़ कर लगा लेंगे। इसमें कुछ भी शंका नहीं, कलियुग में तो बहुत ही शीघ्र प्रत्यक्ष दर्शन होते है। वृन्दावन तो आइये सब मालुम हो जायेगा। आनन्द के सागर में डूब जायेंगे। मैं यह नहीं कहती सब त्याग कर आइये, जैसे हैं

4/

आपकी रसीली इसी रूप से बुलाती हूँ मैं तो दर्शन करने के लिए।
आप तो सभी जानते थे, हमको भी बतलाया करते थे।

मैंने ये उपदेश नहीं लिखे हैं जो मन में आया लिख दिया-
जब मैं बालक थी जैसे आपसे कहती थी, पिताजी मुझे
सुन्दर साड़ी ला दीजिए बिना नाराज़ हुए ला देते थे।
इसी रूप से मैं अब ये कहती हूँ कि आप एक बार बहुत ही
शीघ्र वृन्दावन आ जाइए दर्शन करने, इसको पूर्ण करेंगे ही
मुझे आशा है। कृत अपराधों को न विचारेंगे।

आप तो पिताजी ही हैं। मैं तो फिर भी बालिका हूँ अभी
भी क्षमा करेंगे। मेरी इस भीख को पूरा करेंगे कि वृन्दावन आ,
एक बार दर्शन करें। कुटिलता को क्षमा।

~~मैं~~

आपकी शुभचिन्तक
अधम रमा

इस पत्र के माध्यम से व श्रीदेवी जी के बहिन एवं बहनोई (चाचा जी की पुत्री) के वृन्दावन दर्शन हेतु भ्रमण के उपरान्त पिताजी को श्रीदेवी जी के वृन्दावन में होने की जानकारी मिली तथा वे अकेले ही श्री वृन्दावन आये और दर्शर कर चले गये। श्री पिताजी ने श्री श्रीमहाराज जी को सपरिकर शिकारपुर आने का आग्रह किया, जिसे पूज्य श्री महाराज जी ने सहर्ष स्वीकार किया। जिसके फलस्वरूप 1952 में श्री श्रीमहाराज जी सपरिकर शिकारपुर गये जिसमें श्रीदेवी जी भी थीं। इसी काल बीच में श्रीदेवी जी का एक भाई विनोद कुमार व माताजी का स्थूल शरीर पूरा हो चुका था।

जब 1952 में श्री श्रीमहाराज जी, मनोहर बाबा व श्रीदेवी जी सहित सपरिकर शिकारपुर पधारे तो 15 दिन खूब सत्संग-कीर्तन की धूम रही। 1944 में गृहत्याग के समय श्रीदेवी जी "सात साल बाद मिलना होगा" आशय का एक पत्र लिखकर चित्रपट के पीछे चुपके से रख आयी थीं। संभवतः यह वही संयोग था। 15 दिन तक संकीर्तन व सत्संग की धूम मचाकर श्री श्रीमहाराज जी श्रीवृन्दावन लौट आये। साथ में पिताजी व पूज्या कुसुम बहिन भी थी। पूज्य श्री महाराज जी के शिकारपुर प्रवास काल का वातावरण और वृन्दावन आकर गंगा मन्दिर के दिव्य वातावरण से प्रभावित हो श्रीदेवी जी की छोटी बहिन पूज्या कुसुम जी ने भी गृह त्याग का निर्णय कर लिया। श्रीदेवी जी के साधनामय जीवन ने इनके लिये प्रेरणा का कार्य किया और उन्होंने श्री वृन्दावन में रहकर ही जीवन भर भजन करने का दृढ़ निश्चय कर लिया तथा पूज्य श्री महाराज जी का चरणाश्रय प्राप्त किया।

यहाँ एक बात और विशेष उल्लेखनीय है कि श्रीदेवी जी के पूज्य ताऊ जी की एकमात्र पुत्री (प्रेम) कृष्णा जी जिन्होंने श्रीदेवी जी के साथ ही गृहत्याग किया था और दोनों बहिने घोर तितिक्षामय नर्मदा के बीहड़ों में साधनारत रहीं व श्रीदेवी जी की इच्छानुसार टायफायड की बीमारी के पश्चात् अलग रहकर साधना करती रहीं उनको भी श्री बाबा मनोहर जी व श्रीदेवी जी के आग्रह करने पर सन् 1948 कार्तिक शुक्ल चतुर्दशी को श्री श्रीमहाराज जी की कृपा किरण ने अपना लिया व निज चरणों का आश्रय प्रदान किया।

इनकी स्मरण शक्ति इतनी तीव्र थी कि श्री श्रीमहाराज जी के सत्संग को सुनकर ज्यों का त्यों लिपिबद्ध कर लिया करती थीं। घोर वैराग्य, तितिक्षा एवं एकान्तिक साधना में आप सदैव लीन रहती थी। प्रारम्भ से ही भक्ति के संस्कारों से संस्कारित विमल हृदय, एकान्त प्रिय, कृपा त्रिवेणी में अवगाहन करने वाले श्री घनश्याम जी भी 1952 में पूज्य श्री श्रीमहाराज जी के शरणापन्न हो चुके थे।

प्रातः स्मरणीय पूज्य श्री महाराज जी के चरणाश्रय होने के पश्चात् श्रीदेवी जी की प्रत्येक क्रिया, विचार, रहनी जाना-आना सभी कुछ श्री श्रीजी केन्द्रित था। श्री श्रीजी की प्रत्येक रुचि का ध्यान रखना, उनके निर्देशानुसार साधना करना आपका सहज स्वभाव था। 1949 में उज्जैन यात्रा भी आपने श्री श्रीजी एवं श्री मनोहर बाबा के साथ ही की। इसी

प्रकार 1955 में आप श्री श्रीजी के साथ रामेश्वर यात्रा पर गयी जब श्री श्रीजी का गृहत्याग के पश्चात् प्रथम मिलन अपने परिवार के साथ हुआ। 1955 में श्री श्रीजी परिकर सहित गंगा मन्दिर छोड़कर जुगल घाट पर गोपाल मन्दिर में आ गये थे। क्योंकि परिकर में अब अन्य भक्त सम्मिलित हो गये थे और गंगा मन्दिर में स्थान सीमित था।

पूज्य श्री महाराज जी के परिकर का विस्तार होने के कारण गोपाल मन्दिर भी छोटा पड़ने लगा। अतः कुछ भक्तों के आग्रह पर श्री महाराज जी ने वेणु विनोद कुञ्ज का निर्माण कराया तथा 1963 में यहाँ आ गये। यहाँ भी श्रीदेवी जी पूर्ण मनोयोग से पूज्य श्री महाराज जी की सेवा में संलग्न रहती व उनके निर्देशानुसार रसमयी निकुञ्जोपासना में रत रहतीं। श्रीदेवी जी का अहं भाव "ज्यौं जल घोरे शर्करा" की भाँति श्री श्रीमहाराज जी के युगल चरण सेवा में विलीन हो गया था। श्री महाराज जी के अतिरिक्त अपना भी कुछ है; इन्हें इसका भान ही नहीं था। इस भवन में आने पर श्री श्रीजी के जन्मोत्सव का आयोजन भी वृहद् हो गया था। क्योंकि बाहर के परिकर वृन्द भी आने लगे थे। उनकी खान-पान की सारी व्यवस्था भी देवीजी एक कर्मयोगी सदृश निपुणता के साथ सम्हालती थीं।

श्रीदेवी जी को शारीरिक कष्ट बहुत सहन करने पड़े। किन्तु आपने कभी अपने मन पर उन्हें हावी नहीं होने दिया। आत्मबल इतना कि बड़े से बड़ा शारीरिक कष्ट आपके विश्वास को विचलित कभी नहीं कर सका।

परम पूज्य श्री घनश्यामदास जी (ठाकुरजी) एवं पूज्य श्री मनोहर बाबा के नित्य लीला विहार में सम्मिलित हो जाने के पश्चात् श्रीदेवी जी ने वेणु विनोद कुञ्ज की प्रत्येक व्यवस्था को पूर्ण दक्षता से सम्हाला एवं नवम्बर 2017 से दिसम्बर 2018 तक होने वाले पूज्य श्री महाराज जी के जन्म शताब्दी महोत्सव को आपने अपने सरस निर्देशन में सम्पन्न कराया। पूरे वर्ष भर प्रत्येक माह की शुक्ला एकादशी को कथा, संकीर्तन, रास, सत्संग आदि विभिन्न कार्यों को सम्पन्न कराया तथा परिकर के कई भक्तों को प्रत्येक माह कार्यक्रम में सम्मिलित होने का नियम दिलाया। यहाँ एक विशेष बात उल्लेख करने को मेरी लेखनी आतुर है। माह की प्रत्येक शुक्ल एकादशी को कार्यक्रम होता था तथा दूसरे दिन साधु-सेवा व भण्डारा होता था। इसी प्रकार शताब्दी का समापन आयोजन दिसम्बर 2018 में 15 दिन तक वेणु विनोद कुञ्ज व तमाल कुञ्ज पर सम्पन्न हुआ। जिसमें हजारों भक्त प्रतिदिन सम्मिलित होते थे। उन सबके लिये प्रतिदिन विभिन्न प्रकार के व्यंजन युक्त भोजन व्यवस्था रहती थी। किन्तु श्रीदेवी जी अपने लिये एक प्लेट में कभी दलिया, कभी उपमा, कभी खिचड़ी आदि लेती थी; वह भी परिकर के मध्य सभी को आग्रहपूर्वक खिलाते-परोसवाते हुये। ऐसा नहीं कि अकेले कमरे में बैठकर पाती हों। अस्तु-

जैसा कि पहले निवेदन किया गया कि पूज्य श्री श्रीजी के शरणापन्न होने के पश्चात् श्रीदेवी जी का अपना कोई अहं नहीं रह गया था। पूज्य श्री श्रीजी की रसमयी कृपा किरण (गोपीभाव) से आप्लावित उसकी मस्ती में अपने साम्राज्य में रहतीं। 15 जुलाई 2020 की सन्ध्या जब श्री प्रिया-प्रीतम की निज सहचरी अपना भौतिक कलेवर

त्याग नित्य विहार में सम्मिलित हुई। तब आपका तितिक्षामय साधना का तेजोपुंज स्पष्ट परिलक्षित होता था। प्रातः स्मरणीय परम पूज्य श्री महाराज जी की कृपा से वह तथा श्री मनोहर बाबा कितने आप्लावित थे; इसके लिये पाठकों के सम्मुख पूज्य बाबा द्वारा लिखित "चरित वैभव" से उन्हीं के शब्दों में निम्न उद्धरण देखें-

"सन् 1945 से 1950 तक का समय बहुत ही एकान्त रूप से व्यतीत हुआ था। बस श्रीजी के पास मैं और देवी जी ही साधक रूप में रहते थे। निरन्तर सत्संग, सतत् श्रीजी का सान्निध्य और अगाध प्यार मिलता रहा। मैं और देवीजी नित्य दस-बारह घंटे महामंत्र का जप करते। भगवत् प्राप्ति के लिये श्रीजी के पास बालक के समान मचलते रहते। श्रीजी भी हमें अपने पूर्ण स्नेह से अभिषिक्त करते। तीन-चार वर्षों तक ऐसी ही दिनचर्या रही। एक दिन मैं और देवीजी भगवत् प्राप्ति के लिये श्रीजी के चरणों में अत्यधिक व्याकुलता से रो-रोकर कातर प्रार्थना कर रहे थे कि श्रीजी भी उमड़ पड़े। उन्होंने हमें अश्रुधारा से सिक्त कर दिया। वचन दिया कि पहले तुम्हारा ही कार्य करुँगा फिर किसी का। श्रीजी की इस वाणी को लेकर ही हम निश्चिन्त हैं"।

पूज्य श्रीजी जैसे त्रिकालदर्शी रस सिद्ध सन्त की कृपापोषिता स्वयं सर्व-सामर्थ्यवान श्रीदेवी जी के चरित्र का सांगोपांग लेखन मेरे जैसे पामर की लेखनी की सामर्थ्य नहीं है। श्रीदेवी जी का सम्पूर्ण जीवन अनेक भगवदीय लीलाओं की स्फूर्ति व दर्शन से भरा है। उनमें से कुछ का वर्णन सन्त-विद्वान व भक्त परिकरों ने अपनी लेखनी से किया भी है। कुछ लीलाओं का संकलन कर यहाँ रस-निर्झर रूप में अग्र अंकित है।

15 जुलाई 2020 के पश्चात् 19 जुलाई 2020 को वेणु विनोद कुञ्ज, सेवा कुञ्ज पर ठाकुर श्रीगोरे लाल कुञ्ज, वृन्दावन के श्री महन्त श्री किशोरदेव जू महाराज की अध्यक्षता में श्रद्धांजलि सभा सम्पन्न हुयी। जिसमें धीर समीर कुञ्ज के महन्त श्री मदनमोहन दास जी, श्री मलूकपीठ से दीनबन्धु दास जी, पूज्य संत श्री फूलडोल बिहारी दास जी, रास मंडल निर्मोही अखाड़ा के श्रीमहन्त श्री लाड़िलीशरण जी, चन्द्र सरोवर गोवर्धन से श्री आनन्द जी व वृन्दावन के अनेक गणमान्य भागवताचार्य व विद्वानों ने अपनी भावाञ्जलि व्यक्त की। अध्यक्षीय आसन से पूज्य श्रीमहन्त जी ने अपना आशीर्वचन देते हुये संस्मरण सुनाया कि 16/07/2020 को जब वह श्रीदेवी जी के भौतिक पार्थिव कलेवर का दर्शन कर सायं श्री बिहारी जी के दर्शन को गये तो जितना सजीव आभामय सुन्दर शोभायुक्त श्री बिहारी जी के दर्शन उस दिन हुए-वर्णन करना कठिन है।

नेह ममता प्राणडोरी, प्राणधन से जोड़कर।
काया चली बागडोरी, छाया के कर में छोड़कर॥
गलबाँह देकर चल पड़ी, वो जगत से मुख मोड़कर।
जा बसी प्रिया-प्रिय नगरी, सारे बन्धन तोड़कर॥

श्री गंगा मन्दिर साधना काल - श्रीधाम वृन्दावन
(श्री महाराज जी का विरक्त निजी परिकर)



पूज्य बाबा श्री मनोहर दास जी
चरणाश्रय 1945





पूज्या सुश्री रमा देवी जी
चरणाश्रय 1946



पूज्य श्री घनश्याम दास जी (ठाकुर जी)
चरणाश्रय 1952



पूज्या सुश्री कृष्णा देवी जी
चरणाश्रय 1948



पूज्या सुश्री कुसुम देवी जी
चरणाश्रय 1952

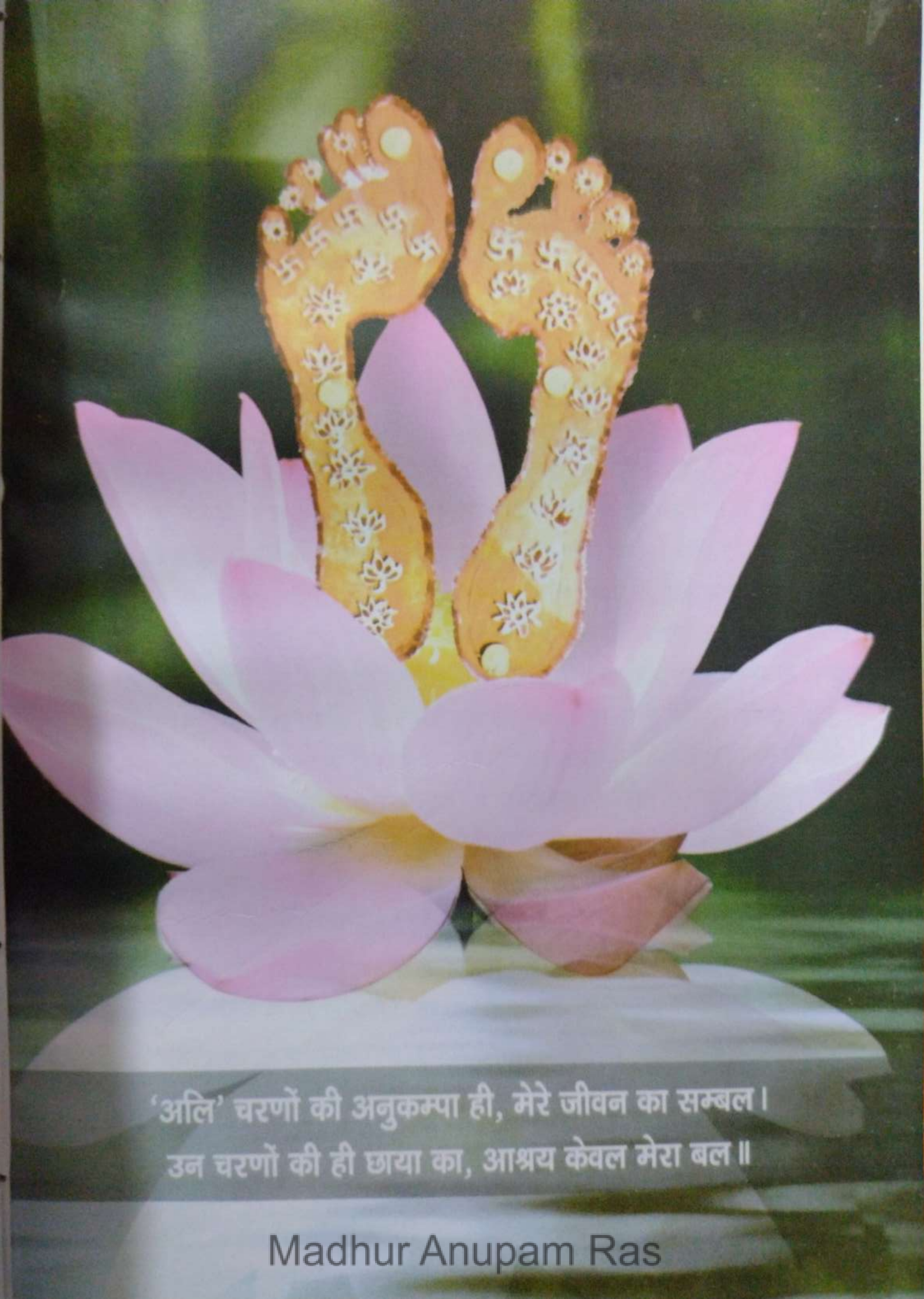
"एक ओर तो श्री गंगा मन्दिर श्री महाराज जी के उद्दाम भाव सौरभ से आठोंयाम महकता रहता था दूसरी ओर यहाँ की विरक्ति का ठाट भी कम दर्शनीय नहीं था........

सत्संग की नशीली धारा सबको बरबस अपने में डुबो देती थी। नीरव रजनी और कोलाहल शून्य गंगा मन्दिर का इसमें पूरा सहयोग रहता था इस एकान्तिक सत्संग में सबको विचित्र-विचित्र अनुभूतियाँ होती थीं। सबके हृदय पिघल कर बह निकलते व सभी एक रस वारिधि में डूब जाते.......

यह गंगा मन्दिर नहीं गम्भीरा मन्दिर है। इसमें 'नाम' लिया नहीं जाता खाया जाता है......

श्री जी के साथ रहते हुए खाने-पीने की कभी इच्छा नहीं होती थी। कोई व्यवहारिक जगत भी है, इसका विचार तक नहीं आता था। गंगा मन्दिर इन दिनों भाव तथा आनन्द का साम्राज्य था तो कहना अतिशयोक्तिनहीं होगी।"

पू० बाबा मनोहर दास जी "चरित वैभव"


‘अलि’ चरणों की अनुकम्पा ही, मेरे जीवन का सम्बल।
उन चरणों की ही छाया का, आश्रय केवल मेरा बल॥
Madhur Anupam Ras

॥ श्रीमन्नित्यनिकुञ्जविहारिणे नमः ॥

॥ श्रीस्वामी हरिदासो विजयतेतराम् ॥

प्रेम रस निष्ठा की मूर्ति
परम पूज्या श्री रमादेवी जी

-श्रीस्वामी रसिक चरण रज किंकर बाबा अलबेली शरण

ठा. श्री गोरेलाल जी कुञ्ज, वृन्दावन

कई जन्मों के भजन, साधन, सत्कर्मों के शुभ संस्कार होते हैं, जो सत्कथा, सत्संग से जाग्रत, उद्दीप्त होकर जीव को साधन पथ पर प्रवृत्त, तत्पर कर देते हैं। इसमें परम करुणामय, अति स्नेह, प्रेम निधि, नित्य साथी प्रियतम श्रीहरि का कृपा-स्नेहमय मंगल विधान तो मुख्य है ही। उसी मंगलमय विधान से जीव भक्ति पथ में निःशंक, बेखटके आगे बढ़ता रहता है।

हमारी चरित्र नायिका श्रीदेवीजी के जीवन में भी ऐसा ही परम मंगलमय भगवदीय विधान उपस्थित हो गया। शिकारपुर, जिला बुलन्दशहर, उनके घर सन्त, महात्मा आते रहते थे। उनके पिता श्री लक्ष्मीनारायण जी उनकी बड़े प्रेम से सेवा करते थे। घर में श्रीमद्भागवत, रामायण, गीता, सत्कथा अंक आदि भक्ति ग्रन्थों का पठन, मनन, वाचन होता रहता था। घर के निकट ही घर का ही श्री शंकरजी का भव्य मन्दिर है। उनका प्रेम-भाव से दर्शन, सेवन होता था। इन्हीं सभी भगवदीय कारणों से श्रीदेवीजी के मन में भक्ति और वैराग्य के संस्कार जाग्रत होते हुए प्रबल रूप में परिणित हो गये। परिणाम स्वरूप गृह त्याग की भावना प्रबल रूप में जाग्रत हो गयी।

गृहत्याग के पश्चात् सर्वप्रथम ये घूमते हुए ब्रज में पहुँचीं। श्री गोवर्धन में झाड़ियों में ये अलग-अलग होकर भजन करने लगीं। भगवदीय मंगलमय विधान से गोवर्धन वासी रामदयाल जी पण्डा इन्हें भोजन पहुँचा देते थे। ये तीन-चार महीने ब्रज में रहीं। शिकारपुर निकट ही है, घर वाले आ सकते हैं, इस कारण से ये मध्य प्रदेश श्री नर्मदा किनारे भ्रमण करते हुए त्याग-वैराग्य साधनामयी कठिन तपस्या में समय व्यतीत करने लगीं। उस समय श्रीकृष्णा जी और श्रीदेवीजी ये दोनों बहनें ही थीं। जन संसर्ग से दूर भ्रमण करते हुए एकान्त वन में रहकर भजन-साधन तत्पर रहना, अल्प भोजन करना, इष्ट भरोसे वन-जन्तुओं से भी भय न करना इनका सहज स्वभाव था।

1. ओंकारेश्वर से कुछ दूर नर्मदा किनारे धावड़ी कुण्ड घना जंगल है। वहाँ पहुँचते हुए संध्या समय अँधेरा हो गया। वहाँ इन्हें एक गाँव दिखा। जब ये पहुँचीं, तो झोंपड़ियों से बना हुआ वह गाँव सूनसान था। वहाँ न पशु थे और न मनुष्य थे। इन्हें कोई

भय नहीं लगा। ये स्थान स्वच्छ करके भजन करने लगीं। लगभग दस बजे रात्रि का समय होगा कि कुछ मनुष्यों का झुण्ड हाथ में फूटी मटकियों में जलती हुई आग और हथियार लिये हुए तथा चिल्लाते हुए आते हुए दिखे। ये कुछ शंकित हुईं, किन्तु कुछ भय नहीं लगा। वे पास में आकर कहने लगे-यहाँ दो बहनें हैं। हम उन्हें लेने के लिये आये हैं। हमारे प्रधान जी को श्री नर्मदा जी ने स्वप्न दिया और कहा कि उन दोनों बहनों को यहाँ ले आओ। यहाँ शेर आता है। उसके उत्पात से हम गाँव छोड़कर दूर रहने लगे हैं।

ये बोलीं-हमें कोई भय नहीं है। वे फिर भी आग्रह पूर्वक इन्हें ले गये और इनका बहुत सम्मान किया। ये सबेरे होते ही वहाँ से चल दीं।

2. एक बार ये रात्रि में नर्मदा किनारे जंगल में सो रही थीं। चाँदनी रात्रि थी। इनके पास से कुछ दूर रास्ते से शेर पानी पीने नर्मदा जी गया। वह पानी पीकर लौट गया। श्रीदेवीजी लेटे-लेटे देख रही थीं। उन्हें कोई भय नहीं लगा।

3. एक बार श्रीदेवीजी अकेली ही थीं। भजन करने और दर्शन करने के लक्ष्य से श्रीदेवीजी ओंकारेश्वर मन्दिर की तीसरी मंजिल पर जाकर भजन करने लगीं। लगभग बारह बजे का समय होगा। श्री नर्मदा जी मल्लाह की लड़की का रूप बनाकर लोटे में दूध लेकर श्रीदेवीजी के पास आयीं और बोलीं-मेरी माँ ने आपके लिये यह दूध भेजा है। यह लोटा मेरे पिता (पिता का नाम बताकर) को दे देना।

शाम के समय जब श्रीदेवीजी नीचे उतरीं और मल्लाह का नाम पूछकर उसे लोटा देने लगीं तो उसने कहा-मेरी कोई लड़की नहीं है। वह श्री नर्मदा जी होंगी।

जहाँ-जहाँ ये जाती थीं, वहाँ इनके त्याग-वैराग्य मय स्वरूप के दर्शन के लिये दूर-दूर से भक्तजन आते थे और अपने को धन्य मानते थे।

4. एक बार जब श्रीदेवीजी महेश्वर एक भक्त के घर थीं। उन्हें उस समय म्यादी ज्वर हुआ, जो बहुत दिन-लगभग एक महीने चला। भक्त परिवार प्रेम से सेवा करते थे। उस समय श्रीदेवीजी का शरीर बहुत कमजोर हो गया था। वे घुटने के बल चलती थीं। वे प्राय: खाट पर मच्छरदानी में लेटी रहती थीं। उस समय उन्हें दिखता कि दो बालक दोनों पाँवों की पिंडुलियों के बगल में लेटे हुए हैं। श्रीदेवीजी को पाँव हिलाने में संकोच होता था तथा उनके सिरहाने मच्छरदानी के भीतर एक स्त्री बैठी हुई है। एक दिन उस स्त्री ने श्रीदेवीजी से कहा-तुम चिन्ता न करो। ये दोनों बालक तुम्हारी शक्ति रूप हैं और मैं भक्ति हूँ।

जब श्रीदेवीजी पूर्ण स्वस्थ हो गयीं, तब वे कुछ दिन वहीं रहकर भजन करने लगीं। उनके मन में श्री वृन्दावन जाकर भजन करने की बड़ी व्याकुलता थी। वे श्रीकृष्ण से व्याकुल होकर प्रार्थना करतीं कि ऐसे सन्त सद्गुरु मिलें, जिनके पास रहकर जीवन सुरक्षित रहे, श्री वृन्दावन रहकर भजन बने और प्रेम की प्राप्ति हो।

भगवदीय कृपामय मंगल विधान जीव को अपनाने, कृपा करने के लिये सदा जाग्रत और तत्पर रहता है।

उस समय श्री महाराज जी श्री वृन्दावन में गंगा मन्दिर में रहते थे। उनको श्रीदेवीजी प्रार्थना करती हुई दिख गयीं। वे बाबा श्री मनोहरदास जी से बोले- मनोहर! यह कौन बालिका है, जो कह रही है, मुझे वृन्दावन बुला लो ?

बस, क्या था, श्री महाराज जी महेश्वर के लिये चल दिये। वहाँ जाकर एक भक्त के यहाँ ठहरे। उस समय श्रीदेवीजी बस से इन्दौर पहुँचीं। वे बस के द्वार से उतरने लगीं कि सामने दूसरी बस के द्वार से भक्त ब्रजवासी बाबूलाल जी कण्डक्टर उतरे। उन्होंने श्रीदेवीजी से कहा-अरे! आप कहाँ जा रही हैं? चलो, महेश्वर में श्री वृन्दावन से बहुत बड़े महापुरुष आये हैं। उन्होंने श्रीदेवीजी को अपनी गाड़ी में बैठा लिया और महेश्वर ले आये।

दूसरे दिन श्रीदेवीजी श्री महाराज जी के दर्शन करने गयीं। श्री महाराज जी पलंग पर बैठे हुए प्रेम रस भरी मस्ती में श्रीकृष्ण रूप माधुरी के पद गा रहे थे। श्री देवीजी प्रणाम करके बैठ गयीं। उन्हें कोई विशेष आकर्षण नहीं हुआ। उनने सोचा गायक है।

जीव के मन में सन्त के स्वरूप की एक कल्पना होती है कि उनके चेहरे पर तेज होगा, ध्यान मुद्रा में बड़ी मस्ती में होंगे आदि।

किन्तु महापुरुषों का दर्शन अमोघ होता है। उनका प्रभाव अमित और अचूक होता है।

श्रीदेवीजी उसी आकर्षण और प्रभाव के कारण श्री महाराज के पास सत्संग में आने लगीं। शनैः-शनैः उनकी श्रद्धा, विश्वास प्रेम बढ़ता ही गया। वे नित्य सत्संग में आने लगीं।

एक दिन श्री महाराज जी ने कहा-श्री वृन्दावन चलने की इच्छा है तो चलो, वहाँ हमारे एक प्रेमी भक्त ब्राह्मण दम्पती हैं, उनके पास रहना।

श्रीदेवीजी श्री महाराज जी के संग श्री वृन्दावन आ गयीं और भजन-साधना में दृढ़ता से लग गयीं। श्री महाराज जी की प्रेम रस भावमयी दशाओं का दर्शन करना, उनका सत्संग श्रवण करना (श्री महाराज जी सत्संग करने लगते तो सारी रात बीत जाती थी) तथा महामन्त्र का जप करना एवं प्रेम-भाव उद्दीपक भक्ति ग्रन्थों को पढ़ना, यही उनके साधन का स्वरूप था।

बाबा श्री मनोहर दास जी और श्रीदेवीजी बारह-बारह घण्टे लगातार तीन लाख महामन्त्र का जप करते थे। बहुत व्याकुलता थी कि कब श्रीकृष्ण के दर्शन होंगे। श्री महाराज जी से दर्शन के लिये बार-बार प्रार्थना करते थे।

एक दिन श्री महाराज जी को भूख लगी। श्रीदेवीजी बहुत ज्वर की अवस्था में थीं, वे उनके लिये खिचड़ी बनाने लगीं। श्री महाराज जी उनके प्रेम भाव को देखकर रीझ गये। महापुरुषों का रीझना अमोघ फलदायी होता है। उसी समय से श्रीदेवीजी को अपने नित्य सिद्ध सखी स्वरूप की स्फूर्ति होने लगीं, जो कि बहुत दुर्लभ है। वह कोटि साधन से भी प्राप्त होती नहीं है।

एक दिन बाबा श्री मनोहर दास जी श्री महाराज जी से सबेरे से ही श्रीकृष्ण के दर्शन के लिये बार-बार प्रार्थना करने लगे। उन दिनों रंगजी में महान सिद्ध दुर्गी माँ रहती थीं। अत: श्री महाराज जी ने अपनी ओढ़ी हुई शाल बाबा पर फेंक दी और बोले-लो दर्शन कर लो तथा चल दिये। बाबा भी श्री महाराज जी के साथ चल दिये। वह शाल श्रीदेवीजी ओढ़कर सो गयीं। श्रीदेवीजी को वह शाल ओढ़ते ही यह संसार अदृश्य हो गया तथा दिव्य कुंज और श्रीकृष्ण लीला के दर्शन होने लगे।

श्री महाराज जी गंगा मन्दिर से जुगल घाट गोपाल मन्दिर में रहने लगे। वहाँ वे श्री महाराज की महाभावमयी दशाओं का दर्शन और रसमयी वाणी का श्रवण करती थीं।

उन दिनों श्री वृन्दावन का बाहरी वातावरण अच्छा था। श्रीदेवीजी पौने 3 बजे नहाकर श्री वृन्दावन की परिक्रमा करती थीं। कभी रामदास जी संग जाते थे, नहीं तो अकेली ही चली जाती थीं। परिक्रमा से आने पर कभी-कभी श्रीदेवीजी को उदर शूल की बड़ी पीड़ा होती थी, किन्तु परिक्रमा व्रत ज्यों का त्यों चलता था।

फिर श्री महाराज जी स्वपरिकर सहित श्री गोपाल मन्दिर से श्री वेणु विनोद कुंज में रहने लगे। यहाँ श्रीदेवीजी ने श्री निधुवन जाकर भजन करने का और श्री बाँकेबिहारीजी की राजभोग आरती के दर्शन करने का नियम लिया। निधुवन में श्रीदेवीजी 5-6 घण्टे महामंत्र का जप करतीं और बाद में श्री केलिमाल का पाठ करती थीं। उसके बाद श्री बिहारीजी की राजभोग आरती के दर्शन करतीं और प्रसाद लेती थीं।

एक दिन निधुवन में भजन करते हुए समय का ख्याल नहीं रहा। समय का व्यतिक्रम होने से श्रीदेवीजी व्याकुल हो गयीं कि अब आरती के दर्शन और प्रसाद नहीं मिलेंगे। भक्तवत्सल प्रभु की लीला निराली है। भक्त का प्रण रखने के लिये प्रभु ने गोस्वामीजनों में कलह उत्पन्न कर दिया, जिससे आरती होने में विलम्ब हो गया और श्रीदेवीजी का प्रण पूरा हो गया।

एक दिन ऐसे ही समय का व्यतिक्रम होने से श्रीदेवीजी शीघ्रता से मन्दिर में गयीं तो क्या देखती हैं कि भक्तवत्सल जनानुरागी श्री बिहारीजी प्रसाद लेकर बाहर खड़े हैं और बोले-लो, प्रसाद लो। आज भोग ठीक नहीं लगा।

निधुवन में भजन करने के लिये श्रीदेवीजी गर्मी में सबेरे पाँच बजे जाती थीं और

सर्दी में सबेरे 10 बजे जाती थीं। नित्य 5-6 घण्टे बैठती थीं। उनका भजन करते-करते विशेष अनुराग बढ़ गया था।

एक दिन की घटना है-श्रीदेवीजी ने अपने नाम जप को पूरा करके श्री केलिमाल का पाठ करना प्रारम्भ कर दिया। पाठ करते-करते श्री केलिमाल के 85 वें पद-"कुंज कुंज डोलनि मृदु बोलनि टूटी लर छूटी पोति अति छबि लागति।" का पाठ चल रहा था कि अहैतुक कृपा का प्रकाश हुआ। वन का प्रकट दृश्य अदृश्य हो गया और दिव्य वन का अद्भुत, चिन्मय दृश्य प्रकट हो गया। युगल किशोर श्री प्रिया-लाल अद्भुत सौन्दर्य-माधुर्य रूप में गलबाहीं दिये हुए आ रहे हैं। उनके संग में सखियाँ भी हैं। हास्य-विनोद करने से मोतियों की माला टूट गयी है, मोती बिखर गये हैं। श्री प्रिया-लाल निकल गये, सखियाँ मोती बिन रही हैं।

यह सरस, दिव्य दृश्य श्रीदेवी को दिखा। वे प्रेम-आनन्द में निमग्न हो गयीं।

एक दिन श्रीदेवीजी को श्री निधुवन रासमण्डल में श्री स्वामी वीठल विपुल देवी जी के पद-

प्यारी नेंक निरखौ नवरंग लालै।
तुव पद पंकज तल रज वन्दत तिलक बनावत भालै॥
तेरे वरन वसन आभूषण उर धरि चम्पक भालै।
श्री वीठल विपुल विनोद बिहारिनि भुज भरि बाहु विशालै॥181॥

इस पद का भावमय सरस दृश्य दिखा। श्री लालजी श्री प्रियाजी को मान मना रहे हैं। वहाँ सखी के संग में श्रीदेवीजी भी सखी स्वरूप से हैं।

एक दिन नियम और श्रीकेलिमाल का पाठ पूरा करके श्रीदेवीजी चलने लगीं तो रासमण्डल में श्रीस्वामी हरिदास जी महाराज घुटनों के बल बैठे हुए दिखे, उनके संग में उनके प्रशिष्य गुरुदेव श्री स्वामी बिहारिणि देव जी भी थे। श्री स्वामी बिहारिणि देव जी ने श्रीदेवीजी के प्रति संकेत करते हुए श्रीस्वामी जी महाराज से कहा-इन पर कृपा करनी चाहिये।

श्री स्वामी जी महाराज बोले-इन पर कृपा करने वाले महापुरुष हैं। जब प्रारम्भ में श्रीदेवीजी श्री निधुवन जाने लगीं, उस समय श्री निधुवन बहुत सघन था। श्रीदेवीजी जहाँ बैठतीं, वहाँ आस-पास बन्दर आकर बैठ जाते। श्रीदेवीजी को डर लगता। वे उठकर जहाँ बैठतीं, वहीं बन्दर आकर बैठ जाते। एक दिन श्रीदेवीजी ने श्रीस्वामी जी महाराज से प्रार्थना की। दूसरे दिन श्रीदेवीजी प्राकट्य स्थल पर बैठी थीं। वहाँ भी बन्दर आकर बैठ गये। वहाँ श्रीदेवीजी को श्री बिहारीजी मुसकाते हुए खड़े दिखे। वे संकेत कर रहे हैं कि डरो मत। इतने में एक बड़ा बन्दर बन्दरों के बीच में आकर खड़ा हो गया। उसने सब

बन्दरों की ओर देखा। सब बन्दर चले गये और वह भी चला गया। उस दिन से श्रीदेवीजी को बन्दरों ने तंग नहीं किया। यह श्रीस्वामी जी महाराज से प्रार्थना करने का चमत्कार हुआ।

श्रीदेवीजी को समाज गायन सुनने का बड़ा प्रेम था। वे समाज गायन सुनने टटिया स्थान और श्री रसिकबिहारी जी के मन्दिर के सदा जाती थीं। उन दिनों समाज गायन शृंखला छपी नहीं थी। अतः श्रीदेवीजी कापी में पद लिखकर ले जाती थीं। टटिया स्थान में एक महात्मा ने उनसे कह दिया यहाँ स्त्रियाँ समाज गायन शृंखला नहीं देखतीं।

श्रीदेवीजी दु:खी हुईं। फिर उन्होंने समाज गायन के पद याद किये। ऐसे समाज गायन से श्रीदेवीजी का प्रेम था। उन्होंने सबसे पहले समाज गायन के पद गुप्त रूप से टेप रिकार्ड में भरे

समाज गायन में आचार्यों का एक बड़ा पद होता है, उसके बद दो बधाई के पद और दो आशीष के पद होते हैं। उस समय प्रसाद बँटता है। श्रीदेवीजी बड़े पद के पूर्ण होते ही चल देती थीं, प्रसाद नहीं ले पाती थीं। यह प्रसाद की अवहेलना बड़ा अपराध है। श्रीदेवीजी तो अपने सहज स्वभाव से चल देती थीं, कोई अपराध की शंका उन्हें नहीं थी। किन्तु करुणामय भक्तवत्सल आचार्य चरण इस भूल को मिटाने के लिये व्यग्र चित्त हो गये और इस भूल को दूर करने के लिये श्री देवीजी के सामने प्रकट हो गये।

श्री रसिक बिहारीजी के मन्दिर में श्री स्वामी जी की समाधि के सामने लता मण्डप के नीचे समाज गायन महोत्सव होता है। एक दिन समाजी मुखिया बाबा श्री गोविन्ददास जी और समाजीगण आ नहीं पाये थे, श्रीदेवीजी पहले पहुँच गयीं। उन्हें श्री रसिकबिहारी कुञ्ज के आठवें आचर्य रसिकवर श्रीस्वामी गोवर्धन देवजी के दर्शन हुए। वे तो दो-ढाई सौ वर्ष पहले हुए हैं, पर कृपा करने के लिये प्रकट दर्शन दिये वे आचार्य चरण समाधि के आगे बरामदे में श्री चरण लटकाये हुए बैठे थे। वे श्रीदेवीजी को प्रसाद देते हुए बोले-प्रसाद लेकर जाया करो। फिर अदृश्य हो गये।

तब से श्रीदेवीजी प्रसाद लेकर जाने लगीं। यदि उन्हें जल्दी होती तो मुझे कह देतीं-तुम प्रसाद ले आना। मैं प्रसाद ले आता था।

एक दिन श्रीदेवीजी को श्रीरसिक बिहारीजी के मन्दिर की श्रीस्वामी जी की समाधि के सामने समाज में "रस भीने बिहारी मन हर्‍यौ हो। ऐसी जुवती धीरज धरै को।।" इस पद के भाव के अनुसार श्री बिहारीजी के दर्शन हुए।

एक दिन श्रीदेवीजी वेणु विनोद कुंज में अपने कक्ष के सामने दिन में सोयी हुई थीं। उन्हें स्वप्न में अद्भुत दर्शन हुए। वे सखी स्वरूप से श्री किशोरी जी की वेणी गूँथ रही हैं। श्री बिहारीजी ने पीछे से आकर श्रीकिशोरी जी सहित उनका गाढ़ आलिंगन किया।

श्रीदेवीजी ने बाद में कहा कि मिलन का क्या सुख होता है, यह मुझे आज अनुभव हुआ।

श्रीस्वामी जी महाराज के प्रति विशेष आकर्षण होने से श्रीदेवीजी को शंका हो गयी कि कहीं श्री महाराज जी छूट न जायँ, यह शंका आते ही श्रीदेवीजी को बहुत कष्ट हुआ। वे श्री महाराज जी के कक्ष के सामने बरामदे में ओढ़कर लेटे हुए रोती रहीं, सबेरे से शाम हो गयी। वे बहुत विरह में हो गयीं। उन्हें श्रीस्वामी जी महाराज ने कृपा करके कहा-चिन्ता न करो, श्रीमहाराज जी छूटेंगे नहीं।

श्रीदेवीजी जब ओंकारेश्वर के निकट श्री नर्मदा किनारे धावड़ी कुण्ड के वन में भ्रमण कर रही थीं, चलते-चलते शाम हो गयी, तब सूनसान स्थान में एक श्रीशिवजी का मन्दिर दिखा। ये दोनों बहनें सफाई करके वहीं विश्राम करने लगीं। रात्रि में एक व्यक्ति आया। वह नख से शिख तक सोने का शृंगार किया हुआ था। उसके हाथ में सोने की टोकरी और सोने की झाडू थी। वह इनसे बोला-यह जगह मेरी है, इसे खाली करो।

ये बोलीं-रात्रि में हम कहाँ जायँ? सबेरे चली जायेंगी।

वह कुछ भी नहीं बोला, चुपचाप चला गया। वह प्रेत था। भजन तेज के आगे वह कुछ भी उत्पात कर नहीं सका। इनको नाम के बल से कुछ भी भय नहीं लगा।

सन् 1955 में श्रीदेवीजी मोतीराम जी और उनके परिवार के साथ मण्डलेश्वर, मध्य प्रदेश गयी थीं। उस समय श्री महाराज जी अज्ञातवास में थे। सम्भव हो, श्री महाराज जी की कुछ जानकारी मिल जाय, इस आशय से उधर गयी हुई थीं। अपने पिताजी बड़े भक्त और सन्त सेवी, सत्संगी थे। वे श्रीदेवीजी और श्री मोतीराम जी को बैलगाड़ी से अपने गाँव चोली लाये थे। घर में चबूतरे पर श्रीदेवीजी विराजी थीं। पिताजी ने श्रीदेवीजी को घर का ही उत्पन्न मीठा पपीता पवाया। बाद में श्रीदेवीजी पड़ोस के घर में गयीं। वहाँ एक बहिन को बालक पैदा हुआ, वह सुन्दर था, किन्तु अन्धा था। श्रीदेवीजी को दया आयी। उसकी अभी तक चर्चा करती थीं। मैं मण्डलेश्वर पढ़ने गया था। वहाँ से आया, तब तक श्रीदेवीजी दूसरे भक्त के घर चली गयी थीं। मैं उतावली से उनके दर्शन करने गया। श्रीदेवीजी पालने में बैठी हुइ थीं। दर्शन करके बहुत आनन्द हुआ, प्रणाम किया। पास में बैठ गया। श्रीदेवीजी ने कहा-गाना जानते हो, तो सुनाओ। मैंने एक रसिया गाकर सुनाया। फिर पिताजी श्रीदेवीजी और मोतीराम जी को बैलगाड़ी से उनके गाँव मोद को पहुँचा आये। पिताजी की मोतीराम जी से पुरानी पहचान थी। वे घर पर आया करते थे।

श्रीदेवीजी के निकुञ्ज गमन के पहले मुझे 21 जून को स्वप्न आया। मैं एक आश्रम में पहुँचा। वह आश्रम वेणु विनोद कुञ्ज ही था, किन्तु मुझे इसका भान नहीं था। मैं जूतों के पास खड़ा था कि पीछे देवीजी ने दरवाजा खोला और मुझसे बोलीं-मुझे महापुरुष से मिला दो।

मैंने कहा-श्रीदेवीजी! आपको कौन रोकता है? चलिये, दर्शन कीजे।

श्रीदेवीजी ने कहा-नहीं-नहीं, मुझे मिला दो।

मैंने कहा-अच्छा चलिये। मैं अकेला भीतर गया, तो देखा, यह तो वेणु विनोद कुञ्ज है। मैं ठाकुरजी के बरामदे में गया। मेरा हाथ ठाकुर वेणु विनोद बिहारीजी के मन्दिर के दरवाजे को लग गया। द्वार खुल गया। देखा कि बाबा श्री मनोहरदास जी मन्दिर में सो रहे हैं। बाबा हँसे। मैंने कहा-बाबा सोइये! ऐसा कहकर मन्दिर का दरवाजा बन्द करके बाबा श्री महाराज जी के बरामदे में पहुँचा कि आँख खुल गयी। मैंने सोचा-ऐसा स्वप्न क्यों आया? क्या श्री महाराज जी श्रीदेवीजी को लेने आये हैं? 15 जुलाई को तो श्रीदेवी को श्री महाराज जी ले ही गये।

श्रीदेवीजी का जीवन आदर्श साधनामय रहा। त्याग, वैराग्य, संयममयी भजन निष्ठा, धामनिष्ठा, श्री गुरु सेवनमयी दृढ़ निष्ठा, इष्ट सेवनमयी निष्ठा आदि निष्ठाएँ उनमें भरपूर थीं। वे निधुवन से आती थीं तो प्रसाद पाने और कुछ विश्राम के बाद ठाकुर श्री वेणु विनोद बिहारीजी के वस्त्र शृंगार को बनाने में लग जाती थीं। कीर्तन-पद गायन सुनना, श्री महाराज का सत्संग श्रवण करना, श्रीबिहारी जी के दर्शन करने जाना आदि आपका सहज स्वभाव था। वे वेणु विनोद कुञ्ज की सब व्यवस्थाओं का ख्याल स्वयं रखती थीं। सभी जनों का प्रेमपूर्वक ख्याल रखती थीं। रुग्णावस्था में भी आपका व्यवहार अन्त तक ऐसे ही रहा। आप अन्त समय में भी बड़ी सावधानी पूर्वक अपने प्राण प्रियतम श्री युगल वर का स्मरण-सेवन करते-करते उनकी सेवा में पहुँच गयीं। श्री युगलकिशोर अपनी प्राण प्रिय सखी को परम रसमय सुख प्रदान करने लगे।

श्री वृन्दावनेश्वरी लाड़िली श्री किशोरीजी और श्रीस्वामी जी, श्री आचार्य चरण कृपा करके हमें भी ऐसा भजन सेवा सुख प्रदान करें।



पूज्य श्रीमहाराज जी की वाणी को लिपिबद्ध करती हुयी पूज्या श्रीदेवी जी।

रस तरंगिनी श्रीदेवी जी

-सुश्री मनोरमा देवी जी,
वेणु विनोद कुञ्ज, वृन्दावन

श्री ललिता भावभाविता, श्री प्रियाप्रीतम के रूप सरोवर में सर्वदा तरंगित रहती थीं। इनके बारे में क्या कहा जाय? क्या लिखा जाय? त्याग, वैराग्य की साक्षात मूर्ति थीं। मध्यप्रदेश के घने जंगलों में नर्मदा तट पर विचरण करती थीं। विचरण करती-करती महेश्वर पहुँच गयीं वहाँ एक जगह ठहरीं, आस-पास के गाँवों से लोग दर्शन करने के लिए आने लगे। जहाँ ठहरी थीं वहाँ मिल (कारखाना) के एक सेठ थे जिन्होंने इनसे प्रार्थना की कि आप केवल दो घण्टे के लिए सबको दर्शन देने की कृपा करें। इन्होंने स्वीकार कर लिया। मण्डलेश्वर से मेरे पिताजी भी दर्शन करने के लिए जाया करते थे।

मेरे को सन् 1965 में पूज्य श्री श्री महाराजजी ने चरणों में आश्रय दिया, तभी से पूज्या श्रीदेवीजी का संग पाया और हमेशा साथ ही रहती थी।

इनकी कुछ लीला अनुभूतियाँ उन्हीं के श्रीमुख से सुनीं। मेरे से कहा अब तू श्री श्रीजी की सब प्रकार की सेवा कर देती है। मेरी इच्छा है कि श्री निधिवन में कम से कम चार घंटे भजन करूँ। मैंने कहा जैसे आपकी इच्छा। गर्मी के दिनों में प्रात: 5 बजे चली जाती और सर्दी में 10 बजे से 5 बजे तक।

एक दिन की बात प्रात: 5 बजे चली गयीं, रोज ही जाती थीं, थोड़ा प्रकाश हो जाता तब लताओं में बैठती थीं। बैठते ही यह पद स्फुरित हुआ-

प्यारी नेकु निरखो नव रंग लाले,
तुव पद पंकज तव रज वंदित, तिलक बनावत भाले।
तेरे वरन वसन आभूषण उर धरि चम्पक भाले,
श्री वीठल विपुल विनोद करहु मिलि भुज भरि वाहु विशाले।।

श्रीजी मान करके बैठ गयीं है तो ललिता जी कह रही हैं प्यारी देखो लाल की कैसी दशा है। श्रीदेवीजी ने कहा कि जैसे श्री ललिता जी ने श्रीजी से कहा मैं भी उस भाव में भाविता जैसी मैं ही कह रही हूँ। ऐसे लगा, भाव तन्मय हो जाती थीं। थोड़ी देर लताओं में बैठी रहीं, उस दिन थोड़ी जल्दी भी वेणु विनोद कुञ्ज आ गयीं। आकर कमरे में मस्ती में बैठी रहीं, जब अधिक समय हुआ तो मैंने जगाया प्रसाद पाने के लिए। जैसे तैसे थोड़ा पाकर फिर कमरा बन्द कर लिया। पूज्य श्री महाराज जी उन दिनों बाहर गये हुए थे। सायं 5 बजे मैंने कहा थोड़ा बाहर बैठो, एकान्त है, सब रास में गये हैं। बाबा मनोहर जी व मैं देवी जी के पास बैठे, उनकी आँखें मस्ती में थोड़ी अरुण हो रही थीं। बाबा ने पूछा आज कुछ और ही है.... क्या हुआ निधिवन में....? कुछ नहीं बोली और टालती रहीं-फिर हमने बहुत आग्रह किया तो कृपा कर यह बताया कि आज ऐसे हुआ-यह लीला स्फूरित हुई (जो उपरोक्त है)।

वहाँ से बिहारी जी दर्शन करके बुर्ज पर चार घंटे तक बैठे रहे।

एक बार की लीला अनुभव यह पद है :-

कुञ्ज कुञ्ज डोलनि मृदु बोलनि,
टूटी लर छूटी पोती अति छवि लागति
भँवर गुञ्जार करत संग डोलत
मानो मेरू रागिनी के संग लिये रागति
जूथ अनेक सुघर जुवतिन के
तुम्हारी रीझ पलव नहीं लागति
श्री हरिदास के स्वामी स्यामा कुञ्जबिहारी पर
तन मन धन न्यौ छावरि करौं का गति।।

यह लीला स्फूरित हो गई, कह रही थीं, सारा बन ही सखियों के नूपुर कलरव के कोलाहल से मुखर था। यह मस्ती में चूर जब आयीं कुञ्ज आकर कमरे की किवाड़ बन्द कर लीं लेटी रहीं। प्रसाद का समय हुआ मैंने कहा चलिए। बाहर आयीं आँखें अरुण हो रही थीं-मस्ती में चूर, थोड़ा प्रसाद लेकर फिर कमरा बन्द कर लिया। सायं 5 बजे करीब बैठीं, मैं व बाबा श्री मनोहर जी ने पूछा आज क्या हुआ? कहा कुछ नहीं, बहुत आग्रह करने पर कृपा करके थोड़ा बताया। आज यह दृश्य दीखा! जो ऊपर पद है। देवी जी का सारा जीवन ऐसी ही लीला अनुभूतियों से भरपूर है।

एक बार टायफायड हो गया बहुत बीमार थीं। गर्मी के दिन थे। मैंने आँगन में लिटा दिया। पास में मैं भी लेट गयी। रात्रि करीब एक बजे कुछ आँखें पोंछने की व थोड़ी बेचैनी की मुद्रा दीखी-मैं बैठ गयी पास ही थी-थोड़ा संवरण हुआ, मैंने पूछने का साहस किया, आवाज दी, देवीजी क्या बात है तबियत तो ठीक है न! हाँ कर दिया। थोड़े पाँव सहलाती रही व पूँछा मैंने कि कुछ तो बताओ तो बताया-

यह पद व लीला स्फुरित हुई-

प्रिया पीताम्बर मुरलि जीती,
हा हा करत न देत लाड़िली,
चरन लुटत निशि बीती।।
राखौ याही दुराई सखी ललिदाति करहौ सचीती।
श्री वीठल विपुल विनोद विहारिनि,
प्रगट करति रस रीति।।

श्रीदेवी जी ने कहा, पुष्प माला से लपेटकर बंशी मेरे को दी। ऐसे बहुत प्रसंग हैं। बात बहुत पुरानी है पहले कभी कभी गोवर्धन, बरसाना भी कुछ दिन रहकर आती थीं। एक दिन गोवर्धन परिक्रमा करने गयी तो सुरभि कुंड पर बैठ गयीं सारा दिन ही बैठी रहीं। दोपहर क्या देखती हैं कि कुंड पर श्री ठाकुरजी गैया को जल पिलाने आये हैं, देखती रहीं, रूप माधुर्य में तन्मय हो गयीं। कई घंटे बीत गये।

श्रीदेवीजी को लीला अनुभूतियां होती रहती थीं। सारा जीवन त्याग, वैराग्य, अनुराग से रंगा हुआ था-रसमय था। ऐसी अनुरागिनी रस तरंगिनी के बारे में क्या लिखा जाय। ये प्रिया प्रीतम के रूप-रस तरंग में तरंगित रहीं।

श्रीदेवीजी समाज गायन सुनने के लिए कभी बिहारीजी के बगीचे में, कभी श्री रसिकबिहारी जी जाया करती थीं। जहाँ कभी कभी आचार्यों के उत्सव आदि भी हुआ करते थे। देवीजी ने पूज्य श्री महाराज जी से कहा मैं आज श्री रसिकबिहारी समाज में जाऊँगी। श्री महाराज जी सायं के समय बाहर आँगन में बैठे थे, कहा यहीं बैठो कल चली जाना। देवीजी ने कहा कि समाज का सुख यहाँ मिल जाय तो नहीं जाऊँगी। श्री महाराज जी ने ऐसी दृष्टि से निहारा कि निहाल हो गयीं। दो घंटे श्री महाराज जी के पास आँख बन्द कर बैठी रहीं जो सुख उनको वहाँ मिलता श्री महाराज जी ने यहीं दिखा दिया। ठाकुरजी की आरती हुई, तब बाह्य चेतना हुई, व श्री बिहारी जी के दर्शन करने मेरे साथ चली गयीं।

निज परिकर में ये विशेष थी, श्री महाराज जी के प्रति अत्यन्त निष्ठा, प्रेम, समर्पण था। सभी सेवाओं में निपुणता पूर्वक सेवारत रहतीं। जब श्री महाराज जी बाहर चले जाते तो अत्यन्त व्याकुल रहतीं। खानपान सब छूट जाता, उनकी याद में अश्रु बहाया करतीं।

सर्दी में निधिवन में घंटों बैठा करतीं तो श्री-श्री जी कहते देखो कैसी बैठी रहती है सर्दी में, थोड़ी गरम-गरम चाय पहुँचानी चाहिए। कहते मनोरमा ही जा सकती है। मैं जाती चाय देने। इतना सघन वन था कि पता नहीं चलता कहाँ बैठी हैं, मेरे को पता था दो तीन जगह बैठती थीं सघन लताओं के बीच, झुककर देखती कहाँ होंगी। थोड़ी खाँसी की आवाज से, उसी दिशा में चली जाती। वे कहती क्यों क्या लायी है? मैंने कहा पूज्य श्री-श्री जी ने चाय भेजी है।

जब श्री महाराज जी का लीला प्रवेश हुआ इनकी दशा देखी नहीं जाती थी, श्री बिहारीजी आना भी छूट गया। जब श्री बिहारीजी को ही इनको देखने की इच्छा हुई तो हवेली में रहने वाली एक सेविका को प्रेरणा दी कि तुम देवीजी को लाओ। वह वेणु विनोद कुञ्ज की पुरानी परिचित थीं। उनके आने पर देवीजी ने कहा हाँ! जाऊँगी! अश्रु पूर्ण लाल आँखों से दर्शन करने गयी और लौटकर कुञ्ज आकर कमरा बन्द कर लिया। फिर प्रतिदिन जाने लगीं।

पूज्य देवीजी की रहनी अनोखी थी। कथनी और रहनी एक थी-असाधारण थी। पीछे-पीछे इनका स्वास्थ्य अधिक खराब रहने लगा- थोड़ा हार्ट में परेशानी रहने लगी। साँस फूलना व कमजोरी अधिक रहने लगी। इतने पर भी श्री वेणु विनोद बिहारी ठाकुरजी की आरती में समय पर तैयार हो जाती। वे सदैव अध्यात्म चिन्तन-लीला लहरियों में लहराती रहती, रस में सराबोर रहती। ऐसी रस तरंगिणी के बारे में क्या कहें। श्री चरणों में शत-शत नमन।

वृन्दावन की सन्त-वन्दनीय श्री देवीजी

-आचार्य श्री चन्द्रप्रकाश "हित किंकर"
नवनीत कुञ्ज, हित की गली, परिक्रमा मार्ग, वृन्दावन

परम सन्त देवीजी के विष्य में कुछ लेखन का विचार आया तो वेणु विनोद कुञ्ज की तीन देवीयों का चिन्तन मानस पटल पर छाया और गो. चन्द्रलाल जी कृत रसिक नाम ध्वनि में वर्णित उन बाईयों का स्मरण हुआ जो इस प्रकार है-

गंगा जमुना कर्मठी और भागमती ये बाई।
हित की चरण शरण ह्वै कै इन सम्पत्ति दम्पति पाई।।

ऐसी ही है सन्त श्रीदेवीजी, कुसुम जी और मनोरमा जी जिन्होंने पूज्य महाराज जी श्री बालकृष्ण दास जी महाराज के चरणों का सान्निध्य प्राप्त कर युगल को लाड़ लड़ाया। इनमें पूज्य देवीजी तो इह-लौकिक लीला संवरण कर प्रिया-प्रियतम की नित्य लीला में प्रवेश कर गयीं। मुझे उनमें कभी मीराजी और कभी करमैती बाई जी का दर्शन होता था। देवीजी सादगी (सतोगुण) की मूर्ति, भक्ति की मूर्ति, प्रेम और करुणा की मूर्ति और शान्ती की मूर्ति थीं। श्वेत खादी की धोती कन्धे पर पल्लू डाले अपने आराध्यय के चिन्तन में डूबी, नेत्रों में एक अनूठी जिज्ञासा लिए हुए अपने प्रियतम से मिलने के लिए व्याकुल सी दिखायी देती थी। उस समय मेरी अवस्था लगभग 20 से 25 वर्ष की रही होगी तब मुझे श्री निधिवनराज में उनका दर्शन हुआ उन दिनों ठा. श्रीबाँकेबिहारी जी के गो. श्री रासबिहारी जी श्री स्वामी हरिदासजी की सेवा किया करते थे। मैं नित्यप्रति निधिवन दर्शन करने जाया करता था मेरे निश्छल और सरल स्वभाव व ठाकुरजी से प्रीति को देखते हुए उन्होंने अपने परिवार में अशौच के समय मुझे श्री स्वामी हरिदास जी महाराज के गर्भगृह में श्रीअंग की सेवा प्रदान की। देवीजी प्रातः स्वामीजी की आरती के पश्चात सभी दर्शनार्थियों के चले जाने के बाद निधिवन जी में आती और श्री स्वामीजी की समाधी-स्थल का दर्शन कर जहाँ श्री बाँकेबिहारी जी का प्राकट्य स्थल, ललिता कुण्ड व रंगमहल के बीच की सघन लताओं में प्रवेश कर जाती और अपराह्न एक-दो बजे के मध्य वहाँ से निकलकर अपनी कुटिया की ओर चली जाती। उन दिनों निधिवन जी में बहुत सघन वन था आवागमन के लिए पगडन्डी ही थी और लताओं के नीचे से झुककर ही निकलना पड़ता था बहुत शान्त वावरण रहता था। यात्री भी शाम के समय ही दर्शनार्थ आते थे, भक्तों का अधिक आवागमन भी नहीं रहता था ऐसे निधिवन राज की महिमा को रसिकों ने इस प्रकार गाया है-

निधिवन राज की जय रहिये।
जामें नित्य विहार निरन्तर काम कहानी कहिए।
श्री हरिदास बिहारत अंग-संग और कहा हमें चहिए।।

भागवत चेतना से अनुप्राणित देवीजी सदैव श्रीकृष्ण की रूप-माधुरी और लीला दर्शन के लिए व्याकुल रहती थीं। निधिवन राज में साधना करने में सर्प और वानरों के भय से निर्भीक साधक ही अपनी साधना में सफल हो सकता है। आप निधिवन जी की चिन्मय भूमि और वृन्दावन रज का स्पर्श तथा लताओं के सेवन से आपकी प्रेमा भक्ति उत्तरोत्तर बढ़ती गयी और युगल चरणारविन्दों में अनुराग धाम-नाम-रज-लता के सेवन से उत्तरोत्तर बढ़ता ही रहा-

प्रेम पदारथ दूर है, विनुसेय रज रुख।

आप सर्वत्र अपने इष्ट का दर्शन करने लगीं वहाँ के सर्प-वानर उनके समीप घूमते रहते जिनका उन्हें तनिक भी भय नहीं रहता था। उनका अपने इष्ट मिलन के लिए व्यथित हृदय यही पुकारता रहता-

अरी किशोरी लाड़ली विनय करूँ कर जोर।
मोहि सदा निज वन बसा, निजु नैंननि की कोर।।

उनका जीवन सौम्य-शान्त और निरभिमान व प्रेमाभक्ति से परिपूर्ण था। वेणु विनोद कुञ्ज में आयोजित बड़े-बड़े दिव्य महामहोत्सवों के अवस पर आप एकान्तिक कोने में बैठी नजर आती कभी एक माला पहने हुए भी मैंने उन्हें नहीं देखा। आप भगवद् साक्षात्कार प्राप्त भक्त साधकों के रूप में वेणु विनोद कुञ्ज में ही नहीं सम्पूर्ण ब्रज मण्डल में आपका कीति वपु सदैव विराजित रहेगा। वृन्दावन की सन्त परम्परा में आपका स्मरण भक्ति भाव पूर्ण से सदैव किया जायेगा। ऐसी परम सन्त श्रीदेवीजी की मैं बारम्बार वन्दना करता हूँ।

मानव जन्म भगवद् कृपा से मिला है।
इस जन्म को श्रीकृष्ण के मधुर मिलन से,
सम्पन्न होने देना चाहिये।
मानव को अपने जन्मदाता, करुणा-सिन्धु, माधुर्य-रस-घन,
श्रीकृष्ण के ही नाम, रूप, लीला और धाम के सतत् स्मरण से
जीवन के प्रत्येक क्षण को धन्य होने देना चाहिये।

-श्रीमहाराज जी

पूज्या देवी जी–नहीं कहीं उपमा कहुँ और

–श्री डॉ. चन्द्रेश गुप्ता
रामकृष्ण मिशन, वृन्दावन

प्रणाम है श्री महाराज जी के चरणों में एवं श्री ठाकुर जी को मनोहर बाबा को एवं पूज्या देवीजी को।

क्या कहूँ कैसे कहूँ, पर कुछ तो कहना है, पूज्या देवी जी जैसी बस पूज्या देवीजी, अद्भुत जीवन चरित्र है आपका, कुछ ऐसी विलक्षण घटनायें प्रत्यक्ष हुयी जो हमने आज तक नहीं पढ़ी। भक्तों के चरित्र में (टायफाईड) की अवस्थायें दोनों पाँवों के पास शक्ति के रूप में दो सुकुमार बालकों के दर्शन तथा संकल्प शक्ति का दर्शन होना) धाम निष्ठा, भजन निष्ठा, सद्गुरु निष्ठा, एकान्त सेवन निष्ठा का मूर्तिमान स्वरूप है मेरी देवी जी।

धाम निष्ठा पर एक बार देवीजी ने कहा 1963 से पहले मैं वृन्दावन से बाहर यदा कदा ही श्री महाराज जी के साथ या अलग से जाती थी पर बहुत कम पर श्रीमहाराज जी ने कृपाकर ऐसा श्रीधाम का आकर्षण प्रदान किया एवं श्री निधिवन राज में कैद कर दिया और सदा-सदा के लिये बसा लिया अपनी आँखों में। एक बार बोली कैसे साधक का मन कर जाता है श्रीधाम से बाहर जाने के लिये मेरे लिये तो 14 भुवनों का साम्राज्य भी फीका है श्री निधिवन राज के सामने। धाम निष्ठा ऐसी कि एक बार बाहर जाने पर माला का नियम नहीं किया और बोली बाहर भजन क्या करना ठाकुर जी (युगल) तो वृन्दावन में है। एक बार आपको स्वप्न हुआ, स्वप्न में पूज्य श्री हनुमान जी पोद्दार भाई जी, पूज्य राधा बाबा श्री महाराज जी एवं ठाकुर जी के दर्शन हुये तथा कहीं बाहर जाने की बात चल रही थी मगर देवीजी बोल पड़ी श्री महाराज जी से कि मैं तो बाहर जाऊँगी नहीं ब्रज की सीमा से आप लोग हो आवें। ऐसी अद्भुत धाम निष्ठा है मेरी देवी जी की, एक बार स्वाथ्य अत्यधिक खराब होने पर (च्वितेंपे)तो आपने श्री डॉ. पारीक जी से निवेदन किया कि आप ब्रज की सीमा तक आगरा से सूरस्थली तक आ जाय इधर से मैं पहुँच जाऊँगी पर ब्रज सीमा के बाहर नहीं जाऊँगी और ऐसा ही हुआ कितनी भी विकट परिस्थिति आने पर भी आपने श्री ब्रज सीमा के बाहर कदम नहीं रखा ऐसी अद्वितीय निष्ठा है पूज्या देवी जी की।

भजन की मूर्तिमान स्वरूप है पूज्या देवीजी, एक बार जो नियम लिया तो वह ले लिया सदैव के लिये, तीन लाख नाम जप व्याकुलता सहित तो श्रीनिधिवनराज में आपने किया, गोपाल मन्दिर में एवं गंगा मन्दिर में अलग शारीरिक अस्वस्थता होने पर आप

कहती चंद्रेश आज इतनी कमजोरी है कि माला व पाठ पूरा नहीं हो पाया जैसे ही ठीक होती भजन अवश्य करती भजन के लिये कहती भजन हो तो ऐसा हो कि प्राणों की व्याकुलता लिये हुये हो। वृन्दावन आये किसलिये! पद है वृन्दावन एक सुन्दर जोरी, क्या वह जोरी दीख गयी? नहीं तो फिर जो व्याकुलता थी वह तो बढ़नी चाहिये थी न कि कम होनी। एक बार आपने श्री कृपासिंधु दास जी बाबा के दर्शन किये तब उनके पूछने पर कितना नाम करती हो आपने कहा तीन लक्ष वह बोले नहीं साढ़े तीन लक्ष किया करो बस तबही से आपने साढ़े तीन लक्ष नाम जप शुरू कर दिया। जब भी श्री वृन्दावन में पूज्य हरि बाबा, उड़िया बाबा जी महाराज व अन्य संत पधारते तो स्वयं श्री महाराज जी पूज्य मनोहर बाबा ठाकुर जी देवी जी के साथ जाकर उनके दर्शन करते तथा सत्संग प्रार्थना में सम्मिलित होते। ठाकुर जी पर विश्वास इतना कि कहाँ सेवा कुंज मोहल्ला कहाँ श्री हरिबाबा जी का आश्रम दावानल कुण्ड सुबह 4 या 5 बजे जब भी सत्संग होता तो आप यदा कदा उसमें सम्मिलित होती, पूज्या देवीजी बतलाती ऐसी निर्भिकता थी कुछ संशय ही नहीं था वही सब लोग (थोड़े से) रास में, कथा में एवं सत्संग में। और उस समय की रासमण्डली के ठाठ भी निराले थे सादा श्रृंगार, कोई पण्डाल नहीं बस वृक्ष के नीचे ठाकुर जी विराजमान हुये और लीला प्रारम्भ, न पर्दा न माईक आदि यशोदाजी का पार्ट अदा करना है बस समाजी ने हारमोनियम से उठकर चुनरी उठायी ओढ़ली बस यशोदा जी का किरदार शुरु और ऐसा भाव उमड़ता कि अलौकिकक राज्य उतर पड़ता।

एकादशी निष्ठा अद्भुत पूज्या देवीजी की आजीवन इस व्रत को निभाया स्वास्थ्य की कैसी भी विपरीतता आयी पर आप अपनी इस निष्ठा में अडिग रही। रात को बहुत सूक्ष्म आहार लेती एवं श्रीमहाराज जी के जन्मोत्सव पर (गीता जयंती एकादशी) सम्पूर्ण रात्रि जागरण में बैठी रहती। शारीरिक अस्वस्थता होने पर भी स्वयं राधादामोदर जी मंदिर व राधारमण जी, राधाकुण्ड की पत्रिका देखकर एकादशी की तिथि निर्धारित करती तथा सभी परिकर को भी व्रत के लिये उत्साहित करती।

सद्गुरु निष्ठा ऐसी कि जो भी श्रीमहाराज जी ने कह दिया वह सारे जीवन का आधार ही बन गया एवं श्री महाराज जी भी आपकी बात को बहुत आदर देते। कभी-2 तो श्री महाराज जी के अस्वस्थ हो जाने पर आप उन पर सविनय शासन करती, नहीं नहीं श्री महाराज जी आपको ऐसा नहीं करना चाहिये एक बार मुझे एक गुरु वंदना का श्लोक मिला सुनकर अति प्रसन्न हुयी वह श्लोक यह है-

ध्यानमूलं गुरुर्मूति, पूजा मूलं गुरुर्पदम्।
मंत्र मूलं गुरुर्वाक्य, मोक्षमूलं गुरुर्कृपा॥

एक बार श्री विश्वनाथ चक्रवर्ती चांद द्वारा रचित गुरुवाष्टक गुरु पूर्णिमा पर

सुना। सुनकर अत्यन्त प्रसन्न हुयीं। आपकी कृपा से ही ठाकुर श्री वेणुविनोद बिहारी जी गंगा मंदिर पधारे। बस श्री महाराज जी से कहा कि मैं युगल सेवा पधराना चाहती हूँ आपकी क्या आज्ञा है। श्रीमहाराजजी ने सहर्ष स्वीकृति प्रदान कर दी और कहा आप सेवा कीजिये किसी प्राण-प्रतिष्ठा की आवश्यकता नहीं है बस 1948 से गंगा मन्दिर में श्री वेणु विनोद बिहारी ठाकुर जी की पधरावनी हुयी और लाड़-चाव की सेवा पूज्या देवीजी ने आरंभ कर दी बस देवीजी एवं ठाकुर वेणु विनोद विहारी के प्राण एक-दूसरे में घुल-मिलकर एकाकार होते चले गये, उनकी सेवा, स्नान, श्रृंगार, आरती, भोग, पोशाक आदि की सेवा देवी जी स्वयं करती, कुछ ही घंटों में देवीजी ठाकुर जी की नयी पोशाक बना लेती कुछ नाप की आवश्यकता नहीं होती थी बस हाथ से नापकर काटती सिलती उस पर कढ़ाई करती एवं धारण करती, दोनों एक दूसरे के मनोरथ को पूर्ण करके प्रसन्न होते।

सब निष्ठाओं में बढ़ते-बढ़ते, श्रीमहाराज जी की कृपा हुयी आपको सखी स्वरूप की प्राप्ति हुयी, स्वामी श्री हरिदास जी की कृपा से श्रीनिधिवनराज आपके लिये प्रत्यक्ष हुआ और श्रीबाँकेबिहारीजी की लीलायें आपको प्रत्यक्ष दृग गोचरित होने लगी और आप बढ़ते-बढ़ते प्रेम की उच्च अवस्थाओं में एकाकार होती हुयी भक्तिर सारमूर्ति सिंधु (श्रीपाद रुप गोस्वामी) द्वारा विरचित श्लोक के जिनमें प्रेम के उत्पन्न होने वाले लक्षणों का वर्णन है। उसका मूर्तिमान स्वरूप बन गयी और परिकर पर कृपा दृष्टि डालने लगी। वह श्लोक है -

क्षान्तिरव्यर्थ कालत्व विरक्तिर्भान शून्यता।
आशा वन्धः समुत्कण्ठ नाम गाने सदा रुचिः।।
आसक्तिस्तद्गुणाख्याने प्रीतिस्तद्वसति स्थले।
इत्यादयोऽनुभावाः स्युजति भावांकुरे जने।

श्री भक्ति रसामृत सिंधु 1-3-25/26 (श्री पाद रूप गोस्वामी) विरचित क्षान्ति-श्री पाद गोस्वामीजी कहते हैं- **यानि क्षोभ रहित शान्ति**। अर्थात् शान्ति होती है साथ आनंद भी होता है और अशांति का कारण होने पर भी यह शान्ति बढ़ती है। चित्त में अशांति नहीं होती है। कभी-2 विषद परिस्थितियों के कारण उपस्थित होने पर भी आप अपनी स्वरूप स्थिति में पूर्ण प्रतिष्ठित रहती एवं श्री महाराजजी इस बात को देखकर अति प्रसन्न होते और कहते ऐसा ही होना चाहिये कि कैसी भी परिस्थिति हो बस अपनी प्रिया प्रियतम की चर्चा चले ही बस अपने स्वरूप में स्थित होकर उस लीला में सम्मिलित हो जाये और देवीजी स्वयं सदैव अपने निज रूप में ही स्थित रही चाहे कोई परिस्थिति हो

या चाहे शारीरिक अस्वस्था कहती बस मैं अपने को उस घटना स्थिति से अलग कर लेती हूँ और अपने वास्तविक रूप में रहती हूँ जिससे उस घटना का मेरे ऊपर प्रभाव नहीं पड़ता, कहती शरीर का चाहे जो हो बस नाम अपने निज स्थान पर रहना चाहिये सर्वेन्द्रियों सहित।

अव्यर्थकालत्वं-अर्थात् समय को एक क्षण के लिये भी नहीं गंवाना। सुबह उठते ही बस एक श्लोक बोलकर नियम में बैठ जाना, बहुत ही सूक्ष्म आहार गंगा मन्दिर एवं गोपाल मन्दिर तक बस एक समय भोजन और चाय। दोपहर को विश्राम कैसा सायं तक भजन फिर स्वाध्याय, सत्संग लेखन सायं के नियम, श्री महाराज जी के लिये कुछ बनाना ठाकुर वेणु विनोद बिहारी की सेवा एवं फिर 3 घंटे के लिये सो जाना वह भी उसी तारतम्यता में, शारीरिक अस्वस्थ होने पर बोली चंद्रेश मैं कभी 3 घंटे से अधिक नहीं सोयी और आज दोपहर में 3 घंटा सोयी। आज पूरा अलि परिकर ऋणी है पूज्या देवीजी का। श्री महाराजजी के सत्संग की मूर्तिमान रूप है पूज्या देवीजी। सारा सत्संग आपकी कृपा से लिपिबद्ध हो सका एवं उपलब्ध हुआ नहीं तो श्री महाराज जी कभी कुछ भगवत प्रेरणा से लिखते स्वान्तः सुखाय परिकर को सुनाते एवं फाड़ देते। बस पूज्या देवीजी ने श्रीमहाराजजी से प्रार्थना की कि आप इन्हें फाड़े नहीं हम अपने पास रखेंगे किसी को दिखायेंगे नहीं। देवीजी का मन देखकर श्री महाराजजी ने स्वीकार कर लिया ऐसे ही एक-एक लेख संग्रहीत होते चले गये। देवीजी एक-एक लेख को अपनी कॉपी में लिखती, पढ़ती और प्रसन्न होती वही संग्रहीत लेख आज विश्व को अद्भुत दशा ग्रन्थ के रूप में प्राप्त हुये। अद्भुत श्यामतमाल, मधुर अनुपम मार्ग, मधुर अनुपम समागम, मधुर अनुपम दशा, मधुर अलंकार वैभव, मधुर अनुपम सम्भ्रम, नवनीत 1-4 भाग तक, सत्संग मुकुटमणि, भगवत सार संकेत तथा अन्य भावमयी रसमयी लीला की लहरियाँ, श्रीमहाराज के सत्संग में देवीजी के प्राण बसते जब श्री महाराजजी स्वयं सुनाते आप डूबती तो कहते पहले सुन लो पीछे डूबना एवं पूछते समझ में आया देवीजी के न कहने पर (केवल बड़ी-बड़ी आँखों से सिर हिलाकर संकेत करती नहीं) श्री महाराज जी दोबारा पढ़ते और आप प्रसन्न होती, शारीरिक अस्वस्थ होने पर सारे सत्संग सुनती। कभी सत्संग छूट जाता किसी कारण स्वास्थ्य या उत्सव से तो कहती बस अब पुनः सत्संग आरम्भ करो। मूर्तिमान भजन का यही रूप एक क्षण भी व्यर्थ नहीं जाता देवीजी का विरक्ति अहा विरक्ति के ठाठ का देवी जी क्या कहना 2 जोड़ी वस्त्रों में सारा जीवन बिता दिया बरसात में कपड़े न सुखने पर तीसरी जोड़ी कुछ दिनों के लिये निकलती बरसाना जाना हो एक थैला लिया। 1 जोड़ी वस्त्र रखे माला झोली ली बस हो गया सारा इंतजाम, संग्रह परिग्रह से अति दूर कुछ आ जाये तो बाँटने में इतनी उदार कि पूछो मत एक बार आपने गाजर का हलुआ बनाया ठाकुर जी के भोग के लिये बनाया भोग लगाया और सब तुरंत बाँट दिया।

शाम अगले दिन तक के लिये कुछ नहीं कौर कोई कुछ संग्रह के लिये कहता तो कहती क्या करना है जीवन इसी से कट जायेगा कितना कष्ट सहन किया पूरा जीवन वैष्णवी रहनी में निकाल दिया। 93 वर्ष की अवस्था होने पर भी भयंकर शीत, वर्षा होने पर भी शंका समाधान व स्नान के लिये साँस फूलने पर भी बाहार शौचालय, स्नानघर जाती कमरे में अटैच बाथरूम नहीं बनाया, एक बार श्री किशोरी रमण जी भागवताचार्य बैठे थे बात चली विरक्ति किसे कहते है। देवीजी बोली जिसकी ठाकुर जी के अलावा कोई इच्छा न हो और इसकी प्रत्यक्ष मूर्ति है देवीजी अपने युगल के अलावा (इस अलावा शब्द के लिये गुंजाइश ही नहीं) बस आसक्ति सदैव अपने युगल से उनके नामरूप गुण लीला सेवा से मन सवेन्द्रियों सहित एवं महाराजजी का सत्संग सारा जीवन आपका दर्पणवत, पुस्तकवत सारे परिकर के सामने था जब बैठो पद कौन से होंगे भोग क्या लगेगा बस सब कुछ ठाकुरजी से जुड़कर।

मान शून्यता-जीवन्त उदाहरण है। देवीजी इस स्तम्भ की, संतों की इतनी अस्वस्था में भी प्रणाम करती कोई साधक प्रणाम करता तो निषेध करती कहती मैं इस योग्य नहीं हूँ। एक निजी परिकर को सावधान करती हुयी कहती कि प्रणाम कराने से अभिमान अहंकार पुष्ट होता है जोकि बाधक है इस मार्ग का। सबको सम्मान हो स्वयं मान से बचो सबसे आप कहकर बात करती सबको आदर देती नाम के आगे भाई या जी लगाकर बात करती, स्वयं मान रहित रहकर सबको मान देना सहज स्वभाव बना देवीजी का।

तितिक्षा-भूख-प्यास, सर्दी-गर्मी, मान-अपमान को सहना अति सहज था देवीजी को। गोपाल मंदिर गंगा मंदिर में तो कुछ था ही नहीं एक समय चाय एक समय भोजन गिनती के बर्तन मोतीरामजी भिक्षा माँगकर लाते वह भी बस उसी दिन के लिये मुश्किल से हो पाती, कल क्या? ऐसा सोचती ही नहीं थी, वेणु विनोद कुंज में व्यवस्था होने पर भी सबसे उपराम बस अपने भजन में रहती जाड़े में भी एक टाट के आसन पर बैठकर आप निधिवनराज में भजन करती सिर पर ओस की बूंदे टपकती आप बस सब सहन कर अपने राज्य में रहती, सुबह एक कप चाय, एक रोटी (कभी) लेकर जाती सायं 3-4 बजे तक निधिवन में भजन करती बहुत वर्षा होने पर वंशी चोरी स्थान पर चली जाती, देवीजी ने कहा चन्द्रेश तुम्हारी उम्र में तो हम जानते भी नहीं थे कि सर्दी-गर्मी क्या होती है। कितनी भी विपरीत परिस्थिति आने पर आप चुपचाप सहन कर लेती अपमान सहकर भी आप अपने लक्ष्य में स्थिर रहती एक बार तो श्रीमहाराजजी ने यहाँ तक कहा कि वाकई आप बहुत सहन करती हो।

मौन-अपना साम्राज्य अपने युगल स्वरूप अपनी उपस्थिति सहित क्या कहें,

क्यों कहें, कहें किससे, बस अपने राज्य में रहती कहती कि पूज्य हरिबाबा जी बहुत जोर देते इस नियम पर, बस आँखें मूंदकर अपने राज्य में रहना सहज है देवीजी के लिये और कहती श्रीमहाराजजी ने अपने एक लेख में कहा है कि उस राज्य में सखियों के कहने की कुछ आवश्यकता ही नहीं, कि यह स्वर किसका? यह सुगन्धि किसकी? बस एक समान तहत समान स्वभाव वाली सब कोई बिना कहे ही समझ लेती है। ऐसी ही विलक्षण स्थिति में रहती पूज्या देवजी। एक बार कहा अनुभव भगवत भजन को भाग्यवान लेह कोई भगवत रसिक कहोई जो भगवत अंगी।

ब्रज स्थानों-में प्रीति अद्‌भुत है देवीजी की सबको प्रेरित करती ब्रजवास करो कईयों को नियम दिलाया कि वानप्रस्थ होते ही ब्रजवास करना विपिन राज सीमा के बहार हरि कौ हू न निहार सुनकर अति प्रसन्नत होती।

आसक्ति-बस ठाकुरजी की बात, उनकी चर्चा सदैव बनाये रखती, उत्सवों पर आचार्यों को बुलवाती, भक्त चरित्र, भागवत उपाख्यान, साधन की रहनी निष्ठा आदि सिद्धान्त की बातें सुनती, समाज गायन कराती उसी में मस्त रहती बाद में पूछती क्या कैसी लगी बस सारी आसक्ति ठाकुर की नाम रूप गुण लीला की चर्चा की बस
आशावन्ध एवं समुत्कण्ठा एवं नामगाने सदा रुचि -

भजन में इतना उत्साह होने पर भी और अधिक भजन की इच्छा करती संतों से पूछती कैसे अधिक भजन हो, एक बार श्रीमहाराज जी से कहा दिन में तो भजन बनता है पर रात में वैसा उत्साह नहीं रहता नशा नहीं रहता बस महाराज जी ने कहा 'अच्छा' देवीजी ने कहा चन्द्रेश महाराज जी का इतना कहना पूरी रात भजन में ऐसी बीती, जैसे सहज दिन एवं दृढ़ विश्वास भी था जो मिलेगा श्री महाराज की कृपा से और मिला भी। एक बार देवजी ठाकुर जी की कुटिया गयी अलार्म देखा ठाकुरजी सुबह 2 बजे उठकर भजन करते थे। उत्कंठा ऐसी अपनी घड़ी में 1.5 बजे का अलार्म लगाकर भजन करना शुरू कर दिया।

सदैव नाममय जीवन रहा पूज्या देवीजी का मैंने एक बार कहा कि देवीजी भक्तमाल में आया है कि महात्मा 5-6 लाख नाम रोज करते थे। कोई ऐसा कैसे संभव है बोली संभव है। मैंने भी 7 लाख नाम जप रोज लिया बरसाने में पर बस तीन दिन कर सकी शरीर ऐसा हो गया जैसे तेजपुंज हवा में चल रहा हो शरीर धरती पर रहना मुश्किल हो गया फिर मैंने वापिस 3-5 लाख करना शुरू कर दिया।

समय बदलता गया, सब कुछ प्राप्त करने पर भी और और प्राप्त करने की अभिलाषा बनी ही रही, श्रीमहाराज जी के अप्रकट होने पर ठाकुर जी बाबा के अप्रगट होने पर आपने ही सारे परिकर को सम्हाला, मंदिर एवं ठाकुर-वेणु विनोद बिहारी एवं श्री

महाराज जी के सेवा आदि के लिये व्यवस्था की सारे उत्सवों के क्रम निर्धारित किये। तीन साल तक तो श्री महाराज जी के अप्रकट होने पर भी श्री महाराज जी आपके लिये प्रगट रहे आप उनसे सभी बात पूछकर ही करतीं और अपने राज्य में मस्त रहतीं, सारा श्रीमहाराज जी का साहित्य छपवाया 2-3 घंटे तक बैठकर प्रूफ रीडिंग करती, दिन में अपना भजन पूरा करती शाम को पद गायन संकीर्तन, सत्संग सुनती और मंदिर के वातावरण को बनाय रखती। धीरे-धीरे शरीर शिथिल होता गया पर आप अपनी सारी निष्ठाओं में स्थित रही वैसे ही भजन पाठ, सूक्ष्म आहार और अपनी मस्ती बस। एक बार भूख कम होती गयी कहती कि जीवन में अब ज्यादा समय नहीं है दिखाती कि देखो शरीर कितना शिथिल हो गया है तथा कहती जो प्राप्त हुआ उसमें तृप्ति नहीं होती और मिलता तो जीवन और होता फिर मैंने कहा देवीजी श्री महाराज जी कहते है कि उस राज्य में कोई ऐसी नहीं मिली कि जो कहे कि मैंने श्रीकृष्ण को पूर्ण रुपेण देख लिया, वहाँ तो लालसा रुपिनी अतृप्ति सहेली सदा बनी ही रहती है तो बस आँख बंदकर मुस्करा देती फिर कहती अरी मेरे नैनन को आहार वाला पद, ऐसे ही देखते रहो वाला पद गा देती सारे पद उनके लिये शाब्दिक न होकर प्रत्यक्ष ही है ऐसी मस्ती में पद गायन के बाद उठती कि बस देखते ही बनता फिर कभी-2 कृपाकर पद का अर्थ भाव रहस्य प्रगट करती। एक बार श्री महारजजी के जन्मोत्सव पर रासलीला हुयी, स्वरूप प्रसाद पा चुके थे देवीजी रसोई से निकली पर पैर से पानी का गिलास लुढ़क गया कोई बोली अरे सम्हाल कर झट श्री महाराज जी बोले-अरे उसे छेड़ो मत वह अपने राज्य में है और देवीजी अपने को सम्हालती हुई आकर बैठ गयीं। बस आपकी कृपा मिली सेवा मिली सह भोजन प्रसाद ग्रहण का सुख मिला, आप जब मुस्कराकर देखती मन प्रसन्न हो जाता यदि कभी-2 सिर पर हाथ रख देती तो मन आह्लाद से भर जाता और विशेष उत्सवों पर अपने हाथ से प्रसाद देती और कभी अपनी माला गले में पहना देती तब तो कहना ही क्या।

मेरी तो बस आपसे प्रार्थना है कि कब आप हमारी सुधि श्रीमहाराजजी, श्रीजी को दिलायेगी, भजन भजन जानकर करवायें और हम पामर विषयी अनाधिकारी जन होने पर भी अपनी अकारण कृपालुता को स्वभाववश हमें भी उस राज्य में प्रवेश दिलायेगी। बस अब श्रीमहाराजजी ठाकुरजी बाबा आपकी कृपा का ही सहारा है आप हमारी सुधि उन्हें उन्हें शीघ्र करायेगी ही निज स्वरूप प्रदान करवायेगी।

दिव्य चमत्कारिक खिचड़ी....!

घटना श्री गंगा मन्दिर में 1947 काल की है। श्री देवीजी को एक बार तेज बुखार हो गया। पूज्य श्री महाराजी को खिचड़ी खाने की इच्छा हुई। श्री देवीजी को जैसे ही महाराज जी की इच्छा का ज्ञान हुआ वे तड़प उठीं। कोई और बनाने वाला था नहीं। उसी तेज चार डिग्री बुखार में श्री देवीजी ने पू. महाराज जी के लिए खिचड़ी बनाई जिसे पू. महाराज जी ने प्रेमपूर्वक तृप्ती से पाया। अन्तर्यामी महाराज जी सब देख रहे थे। श्री देवी जी के प्रेम व समर्पण को देखकर वह रीझ गये और उनकी एक स्नेहिल दृष्टि में ही श्री देवी जी को दिव्य गोपी भाव की प्राप्ति हो गयी। उसी समय से श्री देवीजी अपने इसी दिव्य गोपी भाव से भावित हो लीला दर्शन करने लगीं जिनका पठन पाठकगण रस निर्झर के रूप में कर रहे हैं।

प्रमुख बात जो यहाँ उल्लेखनीय है वह यह कि निज स्वरूप की प्राप्ति हो जाने के उपरान्त श्री देवीजी ने इसका प्राकट्य अपने 45 वर्ष के शेष जीवनकाल में किंचित मात्र भी नहीं होने दिया। निज स्वरूप का इतनी गम्भीरतया मूकास्वादन बिरले सन्तों में ही देखने को मिलता है। हर समय आस्वादनरत रहते हुए भी उच्छ्लन तो दूर उन्होंने कभी इसका आभास तक नहीं होने दिया। न रहनी, न कथनी, न उपदेश और न भावावेश के रूप में।

सन्तः साक्षात हरेर्तनु

गंगा मन्दिर में भावोन्माद काल में एक दिन पूज्य मनोहर बाबाजी एवं श्री देवीजी श्री महाराज जी के निकट बैठे थे। श्री महाराज जी का हाथ देखकर श्री मनोहर जी ने देवीजी से कहा "देखो श्री महाराज जी का हाथ कितना अरुण वर्ण व कोमल है।" उत्सुकता पूर्वक श्री देवीजी ने जैसे ही श्री महाराज जी का हाथ अपने हाथ में लिया उन्हें अपना भान न रहा। उन्होंने दिव्य लीला में अपने को भी सघन वन प्रान्त में सखियों के मध्य देखा। उनमें परस्पर चर्चा हो रही थी कि इस समय यदि श्रीकृष्ण आ जायँ तो हम उन्हें पकड़ लेंगी और आज उनके हाथ अवश्य बाँधेंगी। इतने में श्रीकृष्ण आ ही गये। श्री देवीजी ने देखा उनके अरुण-अरुण अति कोमल कर कमल अपने हाथों में हैं। वे कह रही हैं "अरे! इतने कोमल कर-कमल क्या बाँधने योग्य हैं? इसी समय उन्हें वाह्य ज्ञान हो जाता है तो देखती हैं कि उनके हाथ में श्रीकृष्ण के हाथ की जगह श्री महाराज जी का हाथ है। उस समय की श्री देवीजी की मस्ती वर्णनातीत है। लेखनी वर्णन में असमर्थ है।

चतुर्भुज स्वरूप श्री विष्णु भगवान का दर्शन

श्री गंगा मन्दिर आवास काल में उस समय वहाँ पर पूज्य श्री महाराज जी, बाबा श्री मनोहर जी, श्री देवी जी व श्री मोतीराम जी व माँजी ही थे। एक दिन पूज्य श्री महाराज जी माँ गंगा की प्रतिमा के बराबर वाले छोटे से कक्ष में विश्राम कर रहे थे व श्री बाबा मनोहर जी उनकी चरण सेवा कर रहे थे। श्री देवी जी बाहर के बरामदे में एक फसी सी गुदड़ी पर अल्प विश्राम हेतु लेट गयीं तो आपकी झपकी लग गयी और उस समय आपको श्री विष्णु भगवान का सम्पूर्ण चतुर्भुज स्वरूप का दर्शन हुआ। उस स्वरूप के दर्शन कर आपके नेत्रों से सतत अश्रुधारा प्रवाहित होने लगी जो कि प्रत्यक्ष भी हो रही थी। श्री बाबा मनोहर जी ने इस अश्रु प्रवाह के दृश्य को देखा तो संकेत से श्री महाराज जी को वह दिखाया। श्री महाराज जी के कहने पर श्री बाबा ने हाथ से हिलाकर श्री देवी जी को जगाया। जागने पर जब आपसे अश्रुपात का कारण पूँछा गया तो आपने सम्पूर्ण दर्शन वृतान्त सुनाया जिसको सुनकर श्री महाराज जी ने कहा कि आपके पूर्व जन्म के भजन के कारण आप पर विष्णु भगवान की यह कृपा हुई है।

इसी प्रकार सन् 2012 में रक्षाबन्धन के दिन की घटना है। देहली से गोविन्द व उसका परिवार दर्शन हेतु श्रीधाम आया। दोपहर के समय श्री जीजी (पूज्य कुसुम देवी जी), गोविन्द उसकी पत्नी व दोनों बच्चे माधवी और मैं श्री देवी जी के कक्ष में प्रणाम करने गये तो श्री देवी जी लेटी हुई थीं और उनके नेत्रों से सतत अश्रु प्रवाह हो रहा था। एक दो बार श्री जीजी ने धीरे से देवी जी कहकर पुकारा भी किन्तु आप सतत श्री महाराज जी की कृपा का गुणगान करती रहीं और अश्रु प्रवाह भी होता रहा। काफी समय पश्चात बाह्य चेतना होने पर आप संयत हुयीं और बच्चों की ओर देखकर मुस्कराकर उनके सिर पर प्यार भरा हाथ फेरकर लाड़ किया श्री जीजी के बहुत आग्रह करने पर आपने बताया कि स्वप्न में श्री महाराज जी ने आपका हाथ अपने हाथ में ले रखा था। विशाल सुन्दर यमुना जी का दर्शन था साथ ही श्री युगल सरकार श्री प्रिया-प्रियतम व असंख्य गोपियों का भी दर्शन हुआ। **उसी दिन उन्होंने हम सभी से यह भी कहा कि श्री महाराज जी सर्वसमर्थ व त्रिकालदर्शी सन्त हैं। अन्य किन्हीं सन्त की ओर आकृष्ट होने की आवश्यकता नहीं है।** इसके पश्चात चूंकि परिवार को देहली जाना था सो फल आदि आशीर्वाद देकर उन्होंने सहर्ष जाने की अनुमति प्रदान की।

गंगा मन्दिर काल का प्रसंग है। एक बार पूज्य श्री महाराज जी, श्री मनोहर बाबा व श्री देवीजी (उस समय तक अन्य साधक परिकर नहीं था) इष्ट चर्चा में संलग्न थे। अचानक पूज्य श्री महाराज को कहीं जाने का विचार आया। जाने से पहले आपने पीने के लिए जल माँगा। श्री बाबा ने उन्हें गिलास में लाकर जल दिया जिसे आधा पीने के पश्चात पूज्य श्री महाराज जी हाथ में गिलास थामे दिखाकर कहने लगे- पीने वाला हो मतवाला... .। इतना सुनकर कोई कुछ निर्णय कर पाता कि श्री देवीजी ने तुरन्त वह गिलास पूज्य महाराज जी के हाथ से लिया और एक बार में ही सारा जल पी गयीं। फिर क्या था....। पूज्य श्री महाराज जी व श्री बाबा तो गंगा मन्दिर से बाहर कार्यवश कहीं चले गये और श्री देवीजी दिव्य वृन्दावन की आध्यात्मिक मस्ती में घन्टों अवगाहन करती रहीं।

गुरुजी आ गये...... गुरुजी आ गये......!

पूज्य श्री महाराज जी के चरणाश्रित होने के उपरान्त श्री देवीजी श्रीधाम आ गईं एवं श्री मोतीराम जी माँ जी के साथ श्री महाराज जी के आश्रय में गंगा मन्दिर राणा पति घाट पर रहने लगीं। यहाँ पूज्य श्री श्रीजी के निर्देशानुसार प्रतिदिन अखण्ड नाम जप-रसमयी उपासना प्लावित श्री महाराज जी का सत्संग, घोर विरक्ति पूर्ण साधानारत रहना यही आपकी दिनचर्या हो गई। श्री महाराज जी के अतिरिक्त वाह्य संसार भी कुछ है इसका भान ही नहीं था। हर समय अपूर्व सात्विक मस्ती में आप डूबी रहतीं। स्थूल स्त्रीत्व एवं पुरुषत्व के सांसारिक भावों का आपको भान ही नहीं रहता और उसी मस्ती में आप कभी नीचे वहिर्वास अथवा कोई चादर लपेटकर ऊपर से बनियान पहनकर चादर ओढ़ लेतीं और यमुना पुलिन पर घन्टों बैठकर नाम जप की मस्ती में डूबी रहतीं।

एक बार इसी प्रकार की वेषभूषा पहने आप राणापति घाट पर यमुना पुलिन पर बैठी थीं। उस समय बाल छोटे छोटे कन्धे गरदन तक ही थे। एकान्त स्थान था। तभी कहीं से कोई ग्वारिया घूमता हुआ वहाँ आ गया। इन्हें देखकर पूछा- क्यों तू छोरा है या छोरी? श्री देवीजी एकान्त के इस प्रश्न से एकदम सकपका गईं। समझ नहीं आ रहा था कि क्या उत्तर दें। तभी अचानक काफी दूरी पर एक महात्मा साधु वेषधारी इनको आते हुए दिखे। बस फिर क्या था.... उनकी ओर देखकर एकदम बोलीं गुरुजी आ गये.... गुरुजी आ गये कहकर एक दम वहाँ से भाग आयीं। और गंगा मन्दिर आकर ही साँस ली। ठाकुर का योग क्षेम भी विचित्र होता है।

ठाकुर श्री वेणुविनोद बिहारी जी की सेवा

प्रातः स्मरणीय परम पूज्य श्री महाराज जी के चरणाश्रित होने के पश्चात श्री देवीजी श्री महाराज जी के संरक्षण व श्री मोतीराम जी व माँ जी तथा पूज्य मनोहर जी के साथ राणापति घाट पर गंगा मन्दिर में रहने लगी थीं। प्रतिदिन साढ़े तीन लक्ष नाम जप, श्री महाराज जी का सत्संग एवं उनकी कृपा से प्राप्त 'गोपी भाव' से हृदय लवालव भरा ही रहता था। युगल सरकार की इच्छानुसार उनके मन में युगल स्वरूप विग्रह की सेवा का विचार आया और पूज्य श्री महाराज जी की सहमति उपरान्त आप बाजार से एक सुन्दर श्रीराधा कृष्ण विग्रह ले आयीं। साथ में उनके शृंगार व पोशाक सामिग्री भी लायीं जिनका कुल खर्चा उस समय 32 रु. था। पोशाक आदि बनाने में, कढ़ाई सिलाई आदि का कार्य करने में श्री देवीजी अपने पूर्वाश्रम शिकारपुर के समय से ही निपुण थीं। पूज्य श्री महाराज जी के कर कमलों से प्रियाप्रियतम विराजमान किये गये और भोग लगाकर विधिवत अष्टयाम सेवा प्रारम्भ हो गयी। यह काल सन् 1948-49 का था। इनका ठाकुर श्री वेणु विनोद बिहारी नामकरण तो 1963 में वेणु विनोद कुंज, सेवाकुञ्ज में पधारने पर हुआ। ये ठाकुर बड़े छलिया। विभिन्न लीलाओं के साथ श्री देवीजी से खिलवाड़ करते रहते जिनमें से कुछ का उल्लेख यहाँ किया जा रहा है। जैसा कि पहले भी लिखा जा चुका है कि श्री देवीजी अत्यन्त गम्भीर, शान्त रहकर रसास्वादन करती रहती थीं।

(1) एक बार ईश्वरीय विधानानुसार श्री मोतीराम जी, माँजी व उनका पुत्र गोपाल वेणु विनोद कुञ्ज छोड़कर राणापति घाट पर गोपाल मन्दिर में रहने लगे। चूँकि ठाकुर सेवा व भोग आदि की सेवा माँजी करती थीं तो ठाकुरजी भी उनके साथ गये। किन्तु देवीजी के निधिवन में अपने जाप नियम में बार-बार अत्यधिक रोना आता था। अश्रु रुकने का नाम ही नहीं ले रहे थे। कारण भी श्री देवीजी को समझ नहीं आ रहा था।

इधर माँजी को पता नहीं क्या सूझी कि वह श्रीजी-ठाकुरजी को लेकर वेणु विनोद कुञ्ज आयीं और वहाँ उपस्थित सुश्री मनोरमा जी से बोलीं लो! अपने ठाकुरजी! और ठाकुरजी छोड़कर चली गयीं। सुश्री मनोरमा जी ने ठाकुरजी को यथास्थान पधराया व सेवा की। श्रीदेवी जी नियत समय पर जब निधिवन से आयीं तो वेणु विनोद कुञ्ज में ठाकुरजी को बैठे देखकर आश्चर्य मिश्रित प्रसन्नता छा गयी। देखा कि ठाकुरजी मन्द मन्द मुस्करा रहे हैं।

(2) इसी राणापति घाट पर निवास करते हुए एक दिन माँजी श्री देवीजी, पूज्य महाराजजी के दर्शन करने वेणु विनोद कुञ्ज आयीं तो उन्हें दरवाजे से प्रवेश करते देखकर आँगन में खेल रहे बालक स्वरूप ठाकुरजी व श्रीजी दौड़कर श्री देवीजी के पीछे आकर बच्चे की तरह छिपकर खड़े हो गये कि कहीं माँजी पुनः अपने साथ न ले जायें।

(3) एक बार श्री देवीजी को बरसाने जाना था। जाने के लिए वस्त्र आदि रख लिए तो ठाकुरजी कहते हैं- मेरा क्या होगा-मेरे खाने का क्या होगा। श्री देवीजी मुस्करायीं अपना जाना कुछ समय के लिए स्थगित कर ठाकुरजी के भोग के लिए लड्डू बनाकर रख गयीं बोलीं! यह खा लिया करना। तब से यह छलिया ठाकुर नित्य लड्डू प्रातःकाल उत्थापन के समय खाने के आदी हो गये हैं। सुश्री मनोरमा जी कहती हैं कि अगर भोग के निमित्त लड्डू संयोगवश समाप्त हो जाय-उनकी बनाने की तैयारी कारणवश न हो सके तो ठाकुर किसी न किसी भक्त के माध्यम से अपने लिए लड्डू मंगा लेते हैं। बिना लड्डू का भोग लगाये नहीं रहा जाता ठाकुरजी से!

(4) पूज्य श्री महाराज जी का जन्मोत्सव वेणु विनोद कुञ्ज का निर्माण हो जाने के उपरान्त भी कुछ वर्षों तक पूज्य श्री महाराज जी के कक्ष में अथवा फिर कक्ष के ऊपर बने हाल में मनाया जाने लगा किन्तु धीरे धीरे परिकर का विस्तार भी होने लगा और जन्मोत्सव पर भक्त लोगों की संख्या बढ़ने लगी तो नीचे आंगन में श्रीमहाराज जी के कक्ष के आगे चौकी बिछाकर श्रीमहाराज जी के पूजन, आरती, माल्यार्पण एवं पद गायन संकीर्तन कर उत्सव का आनन्द लिया जाता। पहले उत्सव केवल दो दिन का होता था। ठाकुर वेणु विनोद बिहारी उन दिनों अन्दर मन्दिर में ही विराजते थे। सेवा पूजा विशेष की जाती थी किन्तु सिंहासन अन्दर ही रहता था। एक दिन श्री देवीजी को स्वप्न दिया- क्यों! श्रीमहाराज जी के उत्सव का आनन्द आप लोग स्वयं ही लेते हो। मैं भी तो उस आानन्द का आस्वादन करूँ। मुझे अन्दर ही बैठा रक्खा है। उस समय से अद्यतन उत्सव के मध्य ठाकुरजी का सिंहासन बाहर बरामदे में आता है।

इसी प्रकार की बहुत सी रोचक लीलाएँ ठाकुरजी श्री देवीजी के साथ किया करते थे।

सन्त कृपा असीम है, अपार है, सर्वदिश, सर्वकाल, सर्वदा सभी पर बरस रही है। हाँ! इसके अनुभव के लिये यदि सत्य ही इसे अनुभव इसी जन्म में करने की तीव्र इच्छा हो तो मन, सर्वेन्द्रियों को खाली कर दें, साफ कर दें, उज्ज्वल कर दें। जैसे भगवन्त, जैसे सन्त, वैसे ही इन्हें रिझाने लायक अनुकूल मन भी तो होना चाहिये। परम सुन्दर मन में ही तो आ सकेंगे।

-श्री महाराज जी

साधक स्वतन्त्र नहीं......!

प्रसंग उस काल का है जब श्री देवीजी महेश्वर में श्री अवन्तिका बाई के घर ठहरी हुई थीं और श्री महाराज जी के सत्संग, कीर्तन, भाव मूर्छा आदि का रसास्वादन कर रही थीं। श्री देवीजी मन से श्री महाराज जी के चरणाश्रित हो चुकी थीं। सिद्ध सन्त को प्राप्त करने का उनका लक्ष्य पूरा हो गया था और वह मनसा-वाचा-कर्मणा अपने आपको श्री महाराज जी को समर्पित कर चुकी थीं।

उसी अवधि में श्री विट्ठल जी राजकोट से श्री महाराज जी के दर्शनों के लिए व श्री देवीजी के दर्शनों के लिए कई अन्य भक्त सहित वहाँ आये। खूब कीर्त्तन सत्संग की रस वर्षा हुयी। श्री विट्ठल जी का देवीजी के प्रति मातृ स्वरूपा आदर भाव था ही। उन्होंने श्री देवीजी को एक बार राजकोट चलने की प्रार्थना की। श्री देवीजी ने तुरन्त बेबाक उत्तर दिया- "मैं अब स्वतन्त्र नहीं हूँ"। अर्थात मेरे को कहाँ जाना है - नहीं जाना है - क्या करना है निर्णय अब श्री महाराज जी के आश्रित है। मुझे स्वतन्त्र निर्णय लेने का अधिकार नहीं है।

धन्य है ऐसा आत्मिक चरणाश्रित समर्पण। श्री विट्ठल जी व उनके साथ के सभी भक्त नतमस्तक थे।

समाज शृंखला के पदों का हस्त लेखन

श्री देवीजी को समाज गायन में अत्यधिक रूचि रहती थी। आपकी इस रूचि व साधना का प्रसंग पूज्य मनोरमा जी व पूज्य श्रीश्री अलबेली शरण जी बाबा ने अपनी भावाञ्जलि व्यक्त करते हुए भी किया है। निधिवन साधनाकाल की पद स्फूर्ति का भी दिग्दर्शन आपने कराया है। सुश्री बहिन मनोरमा देवीजी ने तो श्री देवीजी को स्फूर्त कई पदों का उल्लेख भी किया है और उनके समाज प्रेम का उल्लेख किया है।

प्रमुख तथ्य जो यहाँ मुझे इंगित करने की प्रेरणा हो रही है वह यह कि अब से 50 वर्ष पहले समाज शृंखला की छपी हुई पुस्तकें आज की भाँति सर्व सुलभ नहीं थीं। कुछ थोड़ी मात्रा में उपलब्ध भी थीं तो उन पोथियों का स्पर्श स्त्री जाति के लिए निषेध था। श्री देवीजी समाज गायन में पद सुनने के पश्चात उनका मनन-चिन्तन करना चाहती थीं सो उनके दृढ़ प्रतिज्ञ स्वभाव ने उन पदों को कंठस्थ कर स्वयं अपने हाथ से अपनी डायरी (कापी) में लिखने का संकल्प कर लिया। कई बड़े-बड़े पद यथा- 'झूमका'-'सावरी सहेली', 'सहेली' एवं समाज शृंखला के कई अन्य उत्सव पदश्री देवीजी ने अपने कर कमल से लिपिबद्ध किये एवं समयानुसार उस रस सिन्धु में अवगाहन किया।

दर्शनों के लिए श्री बिहारीजी की आज्ञा

घटना परम पूज्य श्री महाराज के श्री विग्रह के लीला प्रवेश के उपरान्त काल की है। अत्यन्त मर्माहत होने के कारण श्री ठाकुरजी, श्री बाबा, श्री देवीजी,श्री कुसुम जी, मनोरमा जी व शोकाकुल अन्य परिकर की दिनचर्या अस्त-व्यस्त हो गई थी। श्री बिहारीजी दर्शन का नित्य नियम भी परिकर के कई लोगों का अव्यवस्थित हो गया था।

परम पूज्य श्री महाराज जी के प्रति श्रद्धावनत एवं श्री हिारीजी के दर्शन के नित्य नियम का दृढ़ता से पालन करने वाली एक साधिका सुश्री सावित्री बाई एक दिन वेणु विनोद कुञ्ज आयीं और बोली "मुझे श्री बिहारीजी ने स्वप्न में आदेश दिया है कि देवीजी को दर्शनों के लिए मन्दिर लाओ।" सावित्री बाई ने बताया कि मेरे को एक बार चोटी पकड़कर श्री बिहारीजी ने कड़क करआदेश दिया है कि मैं आपसे श्री बिहारीजी दर्शन हेतु चलने का आग्रह करूँ।

श्री बिहारीजी का ऐसा संदेश पाकर दूसरे दिन से श्री देवीजी ने मनोरमा बहिन को साथ लेकर दर्शनों हेतु जाना प्रारम्भ किया। इसी प्रकार श्री देवीजी के साधना जीवन में श्री बिहारीजी के कई प्रेरणा प्रसंग हैं जिनका उल्लेख पूज्य मनोरमा बहिन व अन्य भक्तों ने अपने भावार्चन में किया है। यहाँ उनका उल्लेख करने से पुनरावृत्ति होगी।



पूज्य श्री महाराज जी के जन्मोत्सव पर आरती करती हुयी श्रीदेवी जी एवं परिकर

मन-शरीर पर पूर्ण नियन्त्रण

क्या चाय पी.....?

वेणु विनोद कुञ्ज में जिस काल में श्रीदेवी जी प्रातः 7 बजे से निधिवनराज में नाम जप करती थीं उसी काल में आप 10 बजे ब्रज सन्त परमपूज्या सुश्री ऊषा (बोबो) के यहाँ युगल सरकार की लीला चर्चा में अवगाहन हेतु जाया करती थीं। युगल सरकार की प्रेरणा एवं कृपा से पूज्या बोबो को स्फूर्त होकर जो लीला लिपिबद्ध होती थी उसका दूसरे दिन परिकर की साधिकाओं के मध्य वाचन होता था जिसमें श्री देवीजी भी निधिवन से आकर जल्दी से चाय पीकर मनोरमा बहिन के साथ सिन्धी कालोनी पूज्या बोबो जी के आवास पर जाती थीं।

एक दिन श्री देवीजी निधिवन से आने में थोड़ा लेट हो गईं। चाय अगर पी जाती तो और अधिक लेट हो जाती और लीला चर्चा पूरी नहीं सुन पातीं अतः मनोरमा बहिन से कहा चाय नहीं पीनी जल्दी चलो-देरी हो जायगी। और हाँ! वहाँ (पूज्या बोबो के यहाँ) अगर चाय का पूछा जाय तो कह देना पीकर आये हैं।

सिन्धी कालोनी पहुँची तो पूज्या बोबो लीला चर्चा हेतु आपकी प्रतीक्षा कर रही थीं। सभी साधिकाएँ यथा समय आकर अपना अपना आसन ग्रहण कर चुकी थीं। श्रीदेवी जी जैसे ही विराजी पूज्या बोबो ने पूछा-निधिवन से आकर चाय पी ली! श्री देवीजी ने धीरे से हाँ कहकर उत्तर दिया। पूज्या बोबो के युगल सरकार सदैव उनके बराबर में ही विराजते थे और वे वहीं उनकी अष्टयाम् सेवा करती थीं। श्री युगल सरकार ने संकेत से पूज्या बोबो को इशारा कर दिया कि इन्होंने चाय नहीं पी है। पूज्या बोबो एकदम बोली "अच्छा-मनोरमा बतायेगी कि श्री देवीजी ने आज चाय पी ली है कि नहीं।" मनोरमा बहिन ने धीरे से मुस्कराकर कहा नहीं! देरी हो रही थी अतः ऐसे ही चली आईं। पूज्या बोबो ने परिकर की एक साधिका बहिन को चाय लाने के लिए कहा। श्रीदेवी जी के चाय पी लेने के पश्चात ही पूज्या बोबो ने लीला चर्चा प्रारम्भ की।

पूज्या देवीजी के जीवन में ऐसी एक नहीं अनेक घटनाएँ हैं जहाँ समय परिस्थिति, मन, शरीर उनकी साधना में कभी बाधक नहीं बन पाये। मन, शरीर का अधिकार-शासन उनके ऊपर नहीं था अपितु उनका पूर्ण शासन मन एवं शरीर पर था। मन एवं शरीर उनके निर्णयानुसार कार्य करते थे।

रात्रि दो बजे उठकर श्री महाराज जी की वाणी का लिपिबद्ध करना

घटना 2016 के आसपास की है। पूज्य श्री महाराज जी की वाणी 'नवनीत' के प्रकाशनार्थ उसकी प्रूफ रीडिंग की सेवा श्री देवीजी ने मुझे सौंपी। मैं यथा सामर्थ्य उस सेवा को कर रहा था किन्तु बीच-बीच में कुछ व्यवधान आ जाने के कारण प्रूफ रीडिंग का कार्य रुक जाता था। एक दिन श्री देवीजी ने मुझसे कार्य की प्रगति के बारे में जानकारी ली तो मैंने सच्चाई के साथ वस्तु स्थिति से अवगत कराया। सुनकर एकदम गम्भीर हो गईं और बोलीं "जब तक किसी कार्य को येनकेन प्रकारेण हर परिस्थिति में पूरा करने का संकल्प नहीं होता-कार्य पूरा नहीं होता। कोई भी व्यवधान तभी तक कार्य को प्रभावित करता है जब तक हमारा संकल्प सुदृढ़ नहीं होता।" फिर उन्होंने अपना एक उदाहरण देकर मुझे समझाया-बोलीं-"सर्दी के मौसम में हम प्रात: 5 बजे उठकर अपने शारीरिक क्रियाएँ स्नानादि से निवृत्त होकर प्रात: 7 बजे पूज्य श्री महाराज जी की सेवा एवं ठाकुर वेणु विनोद बिहारीजी की आरती में सम्मिलित होते थे। उसके पश्चात प्रात: 8 बजे से 12 बजे तक निधिवन जाने का नियम था। तत्पश्चात बिहारीजी की राजभोग आरती व पूज्य श्री महाराज जी को दोपहर प्रसाद पवाना व परिकर सहित स्वयं भी प्रसाद लेना। तत्पश्चात अपरान्ह 4 बजे से पूज्य श्री महाराज जी के सान्निध्य में सत्संग संकीर्त्तन आदि ठाकुरजी की सायंकालीन आरती-फिर पूज्य महाराज जी की सायंकालीन ब्यारू सेवा आदि की व्यवस्था। इसी बीच में दिन में अपना स्वयं का पाठ नियम व स्वाध्याय। लेकिन पूज्य श्री महाराज जी की वाणी को कागजों से कापियों में लिखने का भी संकल्प था। समय कौन सा रखा जाय? पूरी दिनचर्या व्यस्त थी। मैंने (श्री देवीजी) रात्रि दो बजे से प्रात: 5 बजे तक तीन घंटे का समय इस लेखन कार्य के लिए नियत कर लिया और जब तक कार्य पूरा नहीं हो गया मेरा नियम इसी प्रकार चलता रहा!" अत: किसी भी कार्य को करने के लिए उस कार्य के महत्व के अनुसार समय नियत करना परमावश्यक है। धन्य है ऐसा दृढ़ संकल्प एवं इच्छा शक्ति।

मन का साफ हो जाना, समस्त साधनों का फल है, परिणाम है। पर ये याद रखना कोई भी साधन प्रिय रूप को दे नहीं सकेगा। मन को सदा जागृत, उमंग में शीघ्र मिलने की तैयारी, माने व्याकुल रहना चाहिये।

-श्री महाराज जी

श्रीकृष्ण स्पर्श सुख

घटना लगभग 1970 के आसपास की है। श्रीराधाष्टमी के अवसर पर पूज्य श्री महाराज जी गोरखपुर गये हुए थे। पीछे श्री देवीजी, श्री कुसुम जी व मनोरमा जी ने राधाष्टमी पर बरसाना जाने का विचार किया। ठाकुरजी की सेवा माँ जी कर ही लेती थीं। श्री ललिता छठ वाले दिन श्री देवीजी जब अपना नाम जप पूरा करके श्री स्वामी जी के दर्शनों हेतु समाधि स्थल पर गयीं तो वहाँ सेवायत श्री रासो गोस्वामी जी ने स्वामी जी से सम्बन्धित किसी सेवा के लिए कहा। श्री राधाष्टमी पूज्य स्वामीजी का जन्म दिवस है अत: श्री देवीजी ने विचार किया कि बिहारीजी नहीं चाहते कि हम बरसाना जायें। वेणु विनोद कुञ्ज आकर पूज्य कुसुम जी व मनोरमा जी से बरसाना जाने का मना कर दिया और चुपचाप बिना कुछ बोले अपना कमरा बंद करके बैठ गयीं। उधर पूज्य कुसुम जी व मनोरमा जी ने आपस में विचार किया कि आज कुछ न कुछ विशेष बात अवश्य है। दोनों इसी प्रतीक्षा में रहीं कि कब श्री देवीजी कमरा खोलें और कब उनके श्री मुख से आज का वृतान्त सुनें।

सायं को जब अपना कमरा खोलकर बाहर आयी तो दोनों ने श्री देवीजी से पूछा क्या हुआ? जाना स्थगित क्यों कर दिया? श्री देवीजी ने पहले तो बताने में संकोच किया फिर धीरे से बताया कि गोस्वामी जी द्वारा कोई सेवा कार्य सौंपने के कारण बरसाना जाने का कार्यक्रम स्थगित करना पड़ा। कार्यक्रम स्थगित हो जाने के कारण कोई वार्ता करने का मन नहीं हो रहा था अत: कमरा बन्द कर लिया। कमरा बन्द करके बैठने पर लीला स्फूर्ति हुई कि- श्री देवीजी प्रियाजू की वेणी गूँथ रही हैं। श्री देवीजी के आगे प्रिया जू बैठी थीं और वेणी गूँथन चल रहा था कि पीछे से श्री श्याम सुन्दर आकर खड़े हो गये और उन्होंने अपने दोनों हाथ श्री देवीजी के कन्धों पर से ले जाते हुए पीछे से ही प्रियाजू के दोनों कन्धों पर हाथ रखकर आलिंगन किया। बीच में श्री देवीजी के होने के कारण श्याम सुन्दर जी का सम्पूर्ण स्पर्श सुख श्री देवीजी को भी प्राप्त हो रहा था। श्री देवीजी ने कहा कि आलिंगन सुख कैसा होता है यह उसी दिन पता चला। उस सुख का लेखन लेखनी की सामर्थ्य नहीं है। उसकी मस्ती श्री देवीजी को सायं तक छायी रही और दोनों सखियाँ (पूज्य कुसुम जी व मनोरमा जी) भी आनन्दित होती रहीं।

क्षेत्र सन्यास का संकल्प

अब मन चल वृन्दावन रहिये।
जहाँ विरहत नित युगल माधुरी तिनके दर्शन पैये।
भूख लगे तो ब्रजवासिन के टूक माँगकर खैये।
प्यास लगे तो यमुना तीरे अमिय सरस रस पीजे।
पुनि बंशीवट तरुवर निशदिन राधे राधे गैये।
व्यास स्वामिनी की छवि निरखत विमल विमल यश गैये।

उक्त पद पू. श्रीदेवीजी ने सन् 1947 में श्रीधाम आने के बाद पूज्य पिताजी को सम्बोधित करते हुए लिखा था जिसके पश्चात पूज्य पिताजी श्रीधाम आकर पूज्य श्री महाराज जी के दर्शन किये व समस्त गंगा मन्दिर साधक परिकर को 1952 में शिकारपुर घर ले गये थे जहाँ श्री महाराज जी 15 दिन विराजे व खूब सत्संग संकीर्तन की धूम रही। सन् 1963 मई-जून में श्री ठाकुरजी (श्री घनश्याम जी) को अपनी पूज्य माँ को श्री बद्रीनाथ जी के दर्शनार्थ ले जाना था अतः उस अवसर पर श्री महाराज जी, श्री देवी जी, श्री कुसुम जी, श्री पिताजी, मैं, ऋषिकेश, गीता भवन पहुँच गये थे। उसी अवसर पर गोरखपुर से परम पूज्य श्री भाईजी, श्रीराधा बाबा व अन्य परिकर वृन्द भी ऋषिकेश प्रवास पर थे। श्री ठाकुरजी व श्री जीजी (पू. कुसुम जी) व मैया तो अपने 4-5 अन्य भक्तों के साथ श्री बद्रीनाथ यात्रा पर चले गये और उस काल में श्री महाराज जी, श्री पिताजी, श्री देवीजी व मैं गीता भवन में ही रुके रहे। गंगा पुलिन में वटवृक्ष की छांव में प्रातःकाल श्री भाईजी का सत्संग होता था। उसी काल में प. पूज्य सेठ जीका भी सत्संग एक दो दिन श्रवण करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। यह श्रीदेवीजी की ब्रज क्षेत्र से बाहर जाने की अन्तिम यात्रा थी। दृढ़ निश्चय की धनी श्रीदेवी जी इसके पश्चात कभी ब्रज क्षेत्र से बाहर कदम नहीं रखा चाहे किसी भी प्रकार की परिस्थिति आयी हो।

मन को किसी के उपदेशों की आवश्यकता नहीं।
विवेकवान होने पर मन पथ-प्रदर्शक गुरु-स्वरूप ही है
समझाकर पथगामी बनाने पर वह मित्र हो सकेगा
कुपथगामी हो जाने पर अविवेक के कारण वह शत्रु हो जाता है।
-पूज्य श्रीमहाराज जी

विपिनराज सीमा के बाहर हरि हू को न निहार

मई 1984 काल की बात है। पूज्य श्री महाराज जी को लघु शंका सम्बन्धी कठिनाई के कारण उपचार हेतु देहली जाना पड़ा। पूज्य श्रीमहाराज जी, श्री ठाकुरजी, बाबा श्री मनोहर दास जी, पूज्या कुसुम जीजी व भगवान दास जी श्री काशीनाथ सेठ जी की गाड़ी से देहली गये। वहाँ ईस्ट ऑफ कैलाश श्री लालजी के यहाँ ठहरे व श्री डालमिया जी के परिचित कुशल सर्जन डा. जैन के नर्सिंग होम में इलाज प्रारम्भ हुआ व परीक्षण उपरान्त प्रोस्टेट ग्लैंड बढ़ा हुआ पाया गया जिसका आपरेशन करने का निश्चय किया गया। पू. सुश्री मनोरमा बहिन जी भी बाद में देहली पहुँच गयीं। पूज्या देवी जी का चूंकि ब्रज सीमा से बाहर न जाने का दृढ़ संकल्प था अत: वह व श्रीमती माधवी गोयल वेणु विनोद कुञ्ज में ही रुक गयीं। पूज्या देवीजी प्रतिदिन किसी व्यक्ति को देहली भेजकर अथवा स्वामी श्री फतेहकृष्ण जी के यहाँ फोन पर पूज्य श्रीमहाराज के स्वास्थ्य समाचार मँगाती रहती थीं। पूज्य श्रीमहाराज जी के आपरेशन का समाचार पाते ही बेचैन हो गयीं व जल बिन मीन की तरह तड़फने लगीं। वे किसी भी प्रकार श्री महाराज जी के दर्शन करना चाह रही थीं। इधर रासाचार्य स्वामी श्री फतेहकृष्ण जी व श्री प्रभाकर राव जोशी ने (पूज्य गुरुजी के समकालीन आर.एस.एस. के अग्रणी कार्यकर्ता) ने भी आपरेशन के समय देहली जाने की इच्छा व्यक्त की। अत: निश्चय किया गया कि आपरेशन वाले दिन प्रात: 5 बजे टैक्सी द्वारा देहली चला जाय। श्री देवीजी के साथ श्री वृन्दावन का ही जल व रज व थोड़ा सा अल्पाहार ले जाया जायगा व सीधे नर्सिंग होम जाकर वहीं से सीधे वृन्दावन वापस आया जायगा। पहले दिन माधवी को सभी तैयारी करने का निर्देश श्रीदेवी जी ने दे दिया। व तदनुसार ही सभी तैयारी कर ली गयीं। टैक्सी को बोल दिया गया व जाने वाले दिन प्रात: 4.30 बजे स्वामी श्री फतेहकृष्ण जी व जोशी जी वेणु विनोद कुञ्ज पहुँच गये क्योंकि प्रात: 5 बजे प्रस्थान करना था। किन्तु प्रात:काल की बेला में मानो 5 बजे का समय स्थिर हो गया था। पूज्या देवीजी ने अपना कमरा अन्दर से बन्द कर लिया और माधवी से कहलवा दिया कि वह नहींजायंगी और कोई उन्हें डिस्टर्व न करें। ऐसा कहकर वह एकान्त में अपने कमरे में चली गयीं।

सभी स्तब्ध। किन्तु उनकी आज्ञा को टालने का प्रश्न ही नहीं था फलत: टैक्सी वापिस कर दी गयी व सभी लोग वेणु विनोद कुञ्ज के आँगन में व कुछ श्री महाराज जी के कक्ष की सीढ़ियों पर बैठ गये। ऐसे ही शान्त स्थिर चित्त वातावरण में प्रात: लगभग 8.30 बजे तक बैठे रहे व विचार करते रहे कि श्री देवीजी को कैसे कमरे से बाहर लाया जाय। किसी के चाय आदि कुछ भी लेने का तो प्रश्न ही नहीं था। अन्त में सभी ने माधवी

से श्री देवीजी का कमरा खटखटाने का आग्रह किया। उन्होंने श्री देवीजी का कमरा खटखटाया और धीरे से निवेदन किया श्रीदेवीजी यदि आप बाहर नहीं आती हैं तो कोई भी व्यक्ति बिना आपके चाय आदि ग्रहण नहीं करेगा। सन्त हृदय नवनीत समाना, पूज्या देवीजी ने धीरे से कमरा खोला। लाल-लाल नेत्र, मुख पर असीम वेदना चिन्ह, अतिशय करुण दशा, धीरे से सभी से चाय जलपान आदि लेने का आग्रह किया और सभी के साथ बैठकर स्वयं ने भी थोड़ी सी चाय ली।

बाद में थोड़ा वातावरण हल्का होने पर सभी लोगों के आग्रह पर श्री देवी जी ने बताया कि श्री बिहारीजी ने उन्हें प्रेरणा दी कि तुमको अपना संकल्प तोड़ने की आवश्यकता नहीं है श्री महाराज जी स्वस्थ हो जायेंगे। आप देहली न जायँ।

उधर श्री महाराज जी का आप्रेशन तो ठीक हो गया किन्तु कमजोरी अत्यधिक थी। श्री महाराज जी ने किसी व्यक्तिद्वारा श्री देवीजी को संदेश भिजवाया कि इतनी विह्वल न हुआ करें मेरे हृदय पर कमजोरी के कारण जोर पड़ता है।

उसके कुछ समय पश्चात श्री देवीजी जब गोवर्धन में प्रातःस्मरणीय श्री गया प्रसाद जी पंडितजी के दर्शनार्थ गयीं तो उन्होंने कहा- "बहिन, श्री महाराज जी के प्रेम में तुम्हारी जो दशा हुई उसका अनुभव हमें यहाँ हुआ है। अमोघ वस्तु मिली है-सम्हालकर रखना।"

इसी प्रकार एक बार श्री देवी जी को सोरायसिस हो गया। मथुरा डा. माहेश्वरी का उपचार कराया गया किन्तु कोई विशेष लाभ नहीं हुआ। डा. माहेश्वरी ने स्पष्ट कह दिया कि एलोपैथी दवा इस रोग में प्राथमिक सहायक तो हो सकती है किन्तु रोग को समाप्त नहीं कर सकती। इसके लिए आपको किसी अन्य पैथी का उपचार कराना चाहिए। परन्तु प्रश्न था उपचार क्या हो? वेणु विनोद कुञ्ज में श्री महाराज जी के चरणाश्रित श्री वृन्दावन दास जी उन दिनों होम्योपैथी के प्रसिद्ध चिकित्सक (अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त) डा. पारीख जी से अपने किसी रोग की चिकित्सा करवा रहे थे व उनसे मिलने उनके क्लीनिक आगरा भी जाया करते थे। उन्होंने श्री देवीजी के सम्बन्ध में उनसे चर्चा की तो उन्होंने आश्वासन दिया कि होम्योपैथाी चिकित्सा में सोरायसिस का निश्चित इलाज है आप देवी जी को आगरा ले आइये हम निदान कर दवा प्रारम्भ कर देंगे। श्री वृन्दावन दास जी ने वेणु विनोद कुञ्ज आकर यह समाचार श्री देवीजी को दिया। श्री देवीजी का उत्तर वही... जो निश्चित था- आगरा ब्रज क्षेत्र में नहीं है अतः नहीं जाना है। डा. पारीख ने आग्रह किया पुरातन काल में आगरा को अग्रवन के नाम से जाना जाता था जो कि ब्रज की सीमा क्षेत्र में ही था किन्तु दृढ़ संकल्प की धनी श्री देवी जी कहाँ मानने वाली थीं। पूरे कुञ्ज परिसर में कई दिन तक मंथन चलता रहा और अन्त में श्री महाराज

जी व श्रीराधावल्लभ मन्दिर के सम्माननीय गोस्वामी श्री ललिताशरण जी के विचारोपरान्त आगरा व फरह के बीच में कृष्ण भक्त महाकवि भक्त शिरोमणि श्री सूरदास जी की तपस्या स्थली ग्राम रुनकता तक ब्रज क्षेत्र की सीमा मानी गयी और पूज्य श्री महाराज जी की आज्ञा का पालन करते हुए श्री देवीजी ने रुनकता तक जाने की स्वीकृति दी। उधर डा. पारीख चूंकि अत्यन्त व्यस्त डा. थे तो वह आगरा से रुनकता तक आकर श्री देवीजी की स्थिति देखकर उपचार करते थे और उनके निर्देशानुसार श्री वृन्दावन दास जी श्री देवीजी के लिए दवा लेने आगरा तक जाया करते थे। यह लिखने की आवश्यकता नहीं है कि श्री देवीजी को डा. पारीख की दवा से पूर्ण स्वास्थ्य लाभ हुआ।

एक बार श्री देवी जी बिहारीजी दर्शन के लिए गयीं। रिक्शा में बैठकर वापस लौटते समय सड़क पर धच्ची लगने के कारण उनको कमर में डिश हो गयी। भयंकर वेदना न बैंठे चैन न लेटे चैन। सभी कुञ्जवासी परिकर परेशान क्या किया जाय। वृन्दावन के डा. के. गोपाल व मथुरा के भी दो एक डाक्टर्स से सम्पर्क करने पर एक ही उत्तर मिलता-शीघ्र से शीघ्र ऑपरेशन जो कि उस समय वृन्दावन या मथुरा में हो नहीं सकता था। देहली या आगरा में ही यह सम्भव था। किन्तु विपिन राज सीमा के बाहर.....। श्री देवीजी ने स्पष्ट मना कर दिया बाहर जाने के लिए-कह दिया जो होगा देखा जायगा। पूज्य बाबा मनोहर दास जी को अति चिन्ता हुई तो इसे ठाकुरजी का योग क्षेम कहें या कुछ और उनको जगाधरी वाले गुरुजी का स्मरण आया जो कि होम्योपैथी के उच्च कोटि के विद्वान थे। बाबा ने श्री वृन्दावन दास जी को दवा लेने जगाधारी भेजा। पहले तो गुरुजी ने मना कर दिया कहा आप्रेशन कराओ-सर्वस्व ठाकुर हैं और जहाँ ठाकुर हैं वहीं ब्रज भी है। श्री वृन्दावन दास जी ने बहुत अनुनय विनय व हठ की तो गुरुजी ने तीन पुड़िया दीं ओर कहा कि यदि पहली पुड़िया से कुछ लेशमात्र भी सुधार प्रतीत हो तो ही दूसरी पुड़िया देना। और अगर इन पुड़िया से कुछ लाभ प्रतीत होता है तो ही आगे दवा चलाऊँगा। ठाकुर का ऐसा योग क्षेम कि पहली पुड़िया के पश्चात ही उत्तरोत्तर लाभ होता गया। श्री देवी जी को उनके कमरे में ही तख्त पर बैड रैस्ट की व्यवस्था की गयी केवल शौच के लिए ही उठने की व्यवस्था थी। अजीब संयोग कि तख्त पर लेटे लेटे ही श्री देवी जी ने सदैव की भाँति प्रतिवर्ष होने वाले श्री महाराज जी के जन्मोत्सव की हलवाई व रसोई सम्बन्धी समस्त व्यवस्था सुचारू रूप से की व उत्सव निर्विघ्न सम्पन्न हुआ। साधना सम्बन्धी दृढ़ निश्चयता का परिचय पाठकगण पूर्व में पढ़ ही चुके हैं।

"प्रीतम तू मोहि प्रान ते प्यारो"

दिनांक 04/04/2016 श्री देवी जी का स्वास्थ्य इस बार 21-22 जनवरी 2016 से ही अत्यधिक खराब चल रहा था। बार-बार पतले शौच हो रहे थे जो कि किसी तरह उपचार में नहीं आ रहे थे। दिनांक 25 जनवरी को स्वास्थ्य की स्थिति अत्यन्त चिन्ताजनक हो गयी। शरीर में कमजोरी इतनी हो गयी कि उठने-बैठने में भी कठिनाई होने लगी। 25 की रात्रि 01 बजे से 03 बजे तक डा. अमर सिंह राठौर हर आधे घंटे के अन्तराल से होम्योपैथिक दवा देते रहे तो थोड़ा सा अल्प-सुधार लगा। इस अवधि में पूज्य कुसुम जीजी, मनोरमा जी, मैं, माधवी, श्वेता, शान्ति सभी लोग उनके पास ही रहे। आगरा के विश्वस्तरीय होम्योपैथिक डा. पारीख से भी लगातार सम्पर्क कर डा. चन्द्रेश गुप्ता उपचार कर रहे थे। वह पूर्ण मनोयोग के साथ उपचार कर रहे थे पूज्य देवी जी के प्रति उनका समर्पण भाव है। किन्तु किसी प्रकार कोई विशेष लाभ नहीं हो रहा था। डा. पारीख जी ने होम्योपैथिक 'कालीफास' का घोल बनाकर चम्मच से हर दो घंटे पर देने के लिए कहा। श्वेता व शान्ति 24 घंटे बारी-बारी से सेवा में लगी रहीं। लगभग एक सप्ताह में लगभग डेढ़ माह की लम्बी बीमारी के पश्चात स्थिति में कुछ थोड़ा सा लाभ प्रतीत हुआ। अचानक आज प्रातः श्री राधारमण जी भागवताचार्य स्वास्थ्य समाचार लेने व श्री देवी जी के दर्शन करने आये तो श्री देवी जी ने उनसे सायं संकीर्तन के समय आने के लिए आग्रह किया। जब सायं संकीर्तन में वे आये तो पूज्य श्री महाराज जी रचित पद 'प्रीतम तू मोहि प्रान ते प्यारो' गाने के लिए कहा। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि इस पद को या तो स्वयं महाराज जी अपने श्रीमुख से गाया करते थे या श्री ठाकुर जी (श्री घनश्याम जी शर्मा) अथवा जयन्ती महोत्सव के समय एक बार अनुकरण लीला मंचन के समय श्री राधारमण जी ने (श्री महाराज जी के स्वरूप में अभिनीत) गाया था। तब से इस पद को श्री राधारमण जी ही विशेष प्रसंगानुसार गाया करते हैं। यहाँ विशेष उल्लेखनीय बात यह है कि अत्यन्त रूग्ण होते हुए भी शारीरिक कमजोरी होते हुए भी श्री देवी जी उक्त पद गायन के समय अपने कमरे से बाहर आकर संकीर्तन स्थान पर उपस्थित रहीं।

प्रीतम तू मोहि प्रान ते प्यारो।
तुम मेरी पुतरिन में बसत नित, मैं तव अँखियन तारो।
तुम मेरे मन रोम रोम तन फूल सुगन्ध न न्यारो,
ज्यों फूल सुगन्ध न न्यारो।। प्रीतम तू।।
तुम्हरे मैं वनमाल कंठ की, तुम नयनन कजरा कारो।
मैं मुख चन्द्र में हास्य चन्द्रिका, सिंधु लहरि नहिं न्यारो,
ज्यों सिंधु लहरि नहि न्यारो।। प्रीतम तू।।

मैं तुम्हरे वनमाल पुष्पमधि, धागा होत न न्यारो,
ज्यों धागा होत न न्यारो।। प्रीतम तू।।
वंशी सुधा अनुराग राग मैं पद्म गन्ध नहिं न्यारो,
हौं मुख पद्म गन्ध नहिं न्यारो।। प्रीतम तू।।
तुम रुचिकर श्याम तमाल तरुण, मैं विलुलित वेलि न न्यारो,
तव मुख सुख अरविन्द सदन, मैं नयन 'अली' मतवारो,
मेरे नयन 'अलि' मतवारो।। प्रीतम तू।।



आराध्य श्रीबाँकेबिहारी जी की प्रसादी चुनरी एवं माला धारण कराये जाने के उपरान्त भावुक प्रसन्न मुद्रा पूज्या श्रीदेवी जी।

"ये संचालक ये प्रबन्धक"

एक बार उत्सव प्रबन्ध सम्बन्धी किसी साधारण घटना को लेकर श्री देवी जी विचार मग्न थीं। उसी विचार अवस्था में आपको नींद की झपकी लग गयी। देखती क्या हैं कि आगे-आगे श्री बाँकेबिहारी जी चल रहे हैं व उनके पीछे-पीछे श्री महाराज जी। बड़े जोर-जोर से संकीर्त्तन हो रहा है जिसके बोल थे "ये संचालक - ये प्रबन्धक" - जिस समय संचालक शब्द का घोष होता था तो श्री बाँकेबिहारी जी की ओर संकेत होता था और जिस समय प्रबन्धक शब्द का घोष होता था उस समय पूज्य श्री महाराज जी की ओर संकेत होता था। अर्थात् जो कुछ भी हो रहा है वह सभी श्री बाँकेबिहारी जी के संचालन में उनकी इच्छानुसार ही हो रहा है जिसे वह (श्री बिहारीजी) पूज्य श्री महाराज जी के माध्यम से करा रहे हैं। श्री देवी जी का कहना था कि उसके पश्चात उनके समक्ष कभी किसी उत्सव की कोई कठिनाई (चाहे अर्थ की हो अथवा कार्य प्रबन्ध की) नहीं आई। हम सभी लोग प्राय: श्री देवी जी से पूज्य श्री महाराज जी के जयन्ती एवं तिरोभाव उत्सवों सम्बन्धी व्यवस्थाएं पूर्व में ही करने का अनुरोध करते थे किन्तु उन्होंने कभी इस पर ध्यान नहीं दिया। उनकी स्पष्ट मान्यता थी कि श्री महाराज जी का उत्सव वे ही अपनी इच्छानुसार निर्विघ्न सम्पन्न करायेंगे हमें तो निमित्त मात्र बनना है। उत्सवों के अवसर पर कथा आदि के निर्णय कभी उन्होंने 15-20 दिन के पूर्व नहीं लिये। कहना न होगा कि सभी उत्सव निर्विघ्न, सोल्लास भव्यतम सम्पन्न होते थे।

एक बार कुञ्ज में उत्सव समय से इतर पूज्य श्री भट्ट जी की कथा का कार्यक्रम रखा गया। कथा विश्राम पर श्री देवी जी के मन में इक्कीस हजार रुपये व्यास पूजन के उपलक्ष्य में समर्पित करने का विचार आया। फिर व्यवस्था सम्बन्धी विचार हुआ। प्रात:काल जैसे ही किसी कार्यवश उन्होंने अपनी अलमारी स्वाध्याय हेतु पुस्तक लेने के लिए खोली तो दस-दस हजार की दो गड्डियाँ एक पुस्तक के पीछे निकल पड़ीं। श्री देवी जी आश्चर्यचकित थीं क्योंकि उनकी स्मृति में उन्होंने यह गड्डियाँ नहीं रखी थीं। इस प्रकार व्यास पूजन का कार्यक्रम निर्विघ्न निश्चित समय पर सम्पन्न हुआ।

अपनी अवांछित विनिन्दिक तुच्छ स्थिति से एकदम उठना पड़ेगा। एकदम के माने पूर्णमन, सर्वेन्द्रिय, तन, रोम-रोम से एकदम हाँ अभी से, इसी क्षण से।

-पूज्य श्रीमहाराज जी

मोहे तो सुहानी लागे ब्रज की डगर री

घटना जुलाई मास सन् 2014 या 2012 की है। आपका स्वास्थ्य अत्यन्त खराब चल रहा था। शरीर में शिथिलता दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही थी व घबराहट भी अत्यधिक होती थी। साँस फूल जाती थी। अस्वस्थता का समाचार जानकर दर्शन हेतु परिकर वृन्द का प्राय: आवागमन होता ही रहता था। किसी तरह स्वास्थ्य में सुधार न होते देख डा. चन्द्रेश गुप्ता ने E.C.G. कराने की प्रार्थना की। E.C.G. करने पर ह्रदय की कमजोरी प्रगट हुई व आपको Complete Bed rest की सलाह चिकित्सकों द्वारा की गयी। किन्तु बड़ी कठिनाई से सभी भक्तों के द्वारा अनुनय विनय करने पर आपने Wheel Chair द्वारा Bathroom जाना स्वीकार किया। किसी भी अवस्था में कमरे के अन्दर ही शौच आदि की व्यवस्था आपने स्वीकार नहीं की। आपके कमरे की एक खिड़की उस तरफ खुलती जिधर संकीर्तन के समय पूज्य श्री महाराज की चौकी रहती थी अत: आप उस खिड़की की तरफ ही अपना सिरहाना करके लेटती थीं जिससे श्री महाराज जी की चौकी के दर्शन होते रहें जबकि उधर सिरहाना करने पर आपके पैर दक्षिण की ओर होते थे जो कि स्वास्थ्य की दृष्टि से निषेध बताया जाता है किन्तु आपने इस ओर कभी ध्यान नहीं दिया और न किसी का सुझाव स्वीकार किया। तो! आपके दर्शन करने हेतु एक दिन सायंकाल आपके प्रिय रासाचार्य स्वामी फतेहकृष्ण जी पधारे। उसी समय चूंकि सायंकालीन दैनिक संकीर्तन प्रारम्भ हो रहा था तो श्री फतेहकृष्ण जी संकीर्तन में सम्मिलित हो गये। आपने अपने कमरे में से खिड़की में से दर्शन करते हुए उसी असहनीय रुग्णावस्था में ही कहलवाया कि श्री स्वामीजी 'मोहे प्यारी लागे ब्रज की डगर री' पद गायें कृपा होगी। श्री स्वामीजी ने पद गायन किया फिर जब वह जाने लगे तो अन्दर से कहलवाया कि स्वामी जी से कहो वे ठाकुरजी से ऐसी प्रार्थना करें कि मुझे (श्री देवीजी) उनकी (श्री ठाकुरजी) स्मृति सदैव बनी रहे।

मोहे तो प्यारी लागे ब्रज की डगर।
लुकि लुकि खेलत आँख मिचौनी
चरण पहाड़ी वगर।।1।। मोहे प्यारी।।
सात पाँच मिलि खेलन निकरी,
कालिन्दी के कगर कगर।।
परमानन्द दास को ठाकुर,
मोहि लियो ब्रज सगर।।2।।

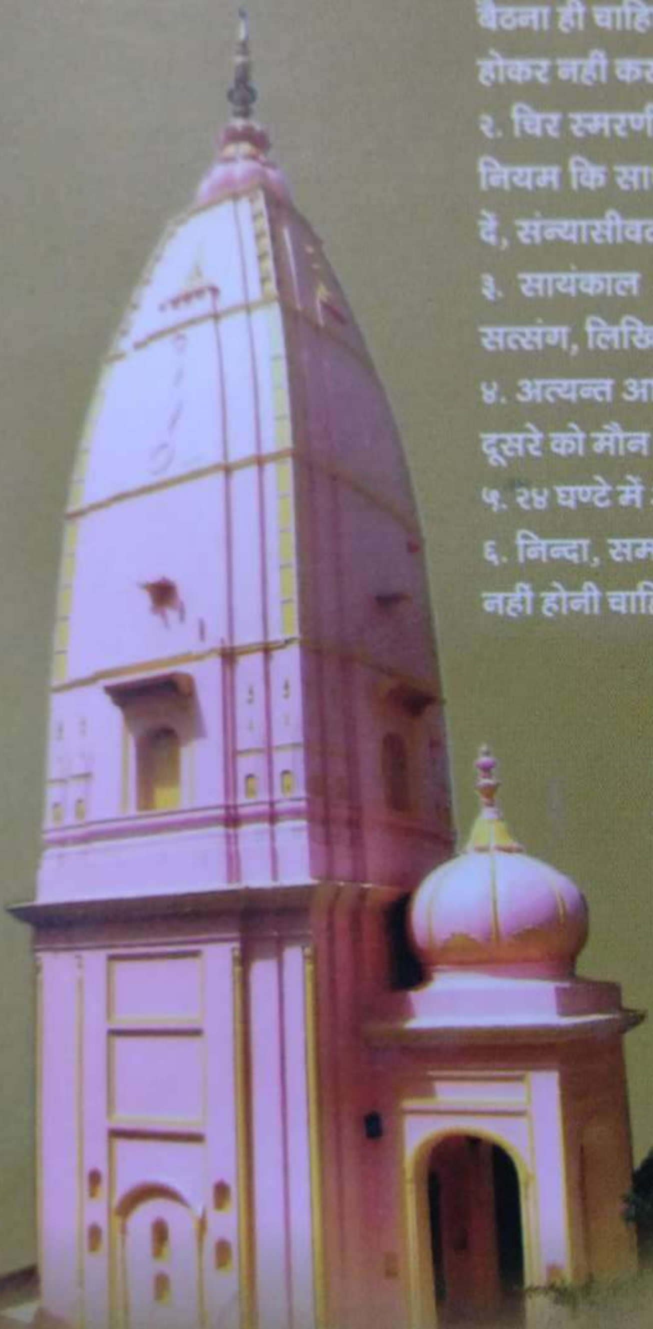
इसके अतिरिक्त स्वामी फतेहकृष्ण जी के श्रीमुख से प्राय: जब भी मन होता तो यह पद भी श्री देवीजी सुना करती थीं-

स्वामिनी तोर सुहाग मनाऊँ-मनाऊँ...।
श्री बृषभानु दुलारी सेवा,
जब जब ये ही जग आऊँ।।1।।
अतर फुलेल अरगजा कुमकुम,
पिय पियारी उबटाऊँ
बीरी सरस लगाय पवाऊँ,
रस भरी वेणु सुनाऊँ।।2।।
फूलन रचि रचि सेज बिछाऊँ,
पिय प्यारी पौढ़ाऊँ।
'श्याम सखी' दरबार रहूँगी
जूठन आस लगाऊँ।।3।।



पूज्या कुसुम देवी जी को आशीर्वाद प्रदान करते हुए पूज्या श्रीदेवी जी।

साधक की आदर्श रहनी



१. ब्राह्म मुहूर्त में चार बजे प्रत्येक को जाग्रत होकर कथित नियम में बैठना ही चाहिए। प्रातःकाल से १२ बजे तक परस्पर अन्य चर्चा, एकत्रित होकर नही करनी चाहिए। जहाँ तक बन सके मौन रहना चाहिए।

२. चिर स्मरणीय, अनुसरणीय है यह अत्यंत सुन्दर सर्वप्रमुख (प्रधान) नियम कि साधक-साधिकाएँ परस्पर चरण स्पर्श तक न करें, न करने दें, संन्यासीवत् ही रहना चाहिए।

३. सायंकाल 4 से 6 बजे तक सामूहिक स्थिति रहनी चाहिए माने सत्संग, लिखित, नित्यप्रति पढ़ना चाहिए।

४. अत्यन्त आवश्कीय व्यावहारिक बातें ही करेंगे। व्यर्थ बातें हों तो एक दूसरे को मौन करा सकेंगे, या उठ कर चले जा सकेंगें।

५. २४ घण्टे में अन्य चर्चा, हास्य-मजाक बिल्कुल नही होना चाहिए।

६. निन्दा, समालोचना, परदोष दर्शन एवं इस विषय में चर्चा बिल्कुल ही नहीं होनी चाहिए।

७. सत्संगी प्रियजनों के अलावा, नवागन्तुक परिचित हों, या गृहस्थ हो, बाहर से कोई आ जाय, उसके पास बैठ कर व्यर्थ बातें करना नहीं चाहिए। आगन्तुक से बातें करना ही कथित नियमों से वंचित होना है।

इत्यादि नियमों को पालन करने में असमर्थ हों, लाचार हों, क्रोध कभी आजाय तो सन्तों के निकट रहने की आवश्यकता नहीं है, कारण मनुष्य जन्म से वंचित होने की तैयारी में रहने वाले को सन्त-समीपता से वंचित होना, सहर्ष स्वीकार करना ही पड़ेगा।

यह अमोघ दोहा-सतत, स्मरणीय है तद्वत् आचरण के साथ :-

नारायण हरि लगन में, ये पाँचों नाँहि सुहात।
विषयभोग, निद्रा, हँसी, जगत्-प्रीति बहुबात॥

Chaudhary Press : 9837787802